॥ ॐ ह्रीँ अर्हँ नम : ॥
सिद्धांतमहोदधि प.पू.आ. प्रेमसूरीश्वरगुरुभ्यो नमः
भव - आलोचना
(पापशुद्धि)
www.yugpradhan.com
लेखक
पं. श्री चन्द्रशेखरविजयजी गणिवर

कहेहि सव्वं जो वुत्तो जाणमाणे गुहई ।
न तस्स दिंति पायच्छित्तं बिंति अन्नत्थ सोहय ।।

जो मनुष्य अपने पापव्यापारको जानते हुए भी उसे छिपाने के लिए सामान्य से कह दे कि "मैंने बहोत सारे पाप किए है मुझे उन सबका एकसाथ प्रायश्चित दे दिजिये" तो ऐसे मनुष्यको प्रायश्चित नहीं दिया जाता और कह देना चाहिए कि कोई और गुरु के पास शुद्धि करना ।

न संभरइ जो दोसे सब्भावा न य मायाओ ।
पच्चक्खी साहए नेउ माइणो उ न साहइ ।।

जो मनुष्य अपने हर पापको पुरुषार्थ करके याद करके गुरु समक्ष कहता है और जो पाप याद नहीं है उसके लिए भी प्रायश्चित माँगता है वैसे मनुष्यको प्रायश्चित दिया जाता है । वैसे आत्मा शुद्ध बनते है लेकिन मायावी कभी शुद्ध नहीं होता ।

निट्ठियपापपंका सम्मं आलोइउं गुरु सगासे ।
पत्ता अणंतजीवा सासयसुखं अणाबाहं ।।

जो मनुष्यने अपने पापव्यापार रुप कीचड़का नाश करके गुरु के समक्ष आलोचना की है वैसे अनंत आत्मा सुंदर रीतिसे आलोचना लेकर बाधारहित अनंत शाश्वतसुखको प्राप्त कर चूके है ।

॥ ॐ ह्रीँ अर्हं नम : ॥

सिद्धांतमहोदधि प.पू.आ. प्रेमसूरीश्वर गुरुभ्यो नमः

भव - आलोचना

(पापशुद्धि)

लेखक :

पं. श्री चन्द्रशेखरविजयजी गणिवर

हिन्दीअनुवादप्रेरक :

प.पू.पं. चन्द्रशेखरविजयजी गणिवर के शिष्यरत्न

प. पू. मुनिराज धर्मरक्षितविजयजी महाराज

हिन्दीअनुवादिका :

प.पू.आ. अभयशेखरसूरीश्वरजी के आज्ञानुवर्ति

विद्ववर्या सा. अनंतकीर्तिश्रीजीके शिष्या

सा. संस्कारनिधिश्रीजी महाराज

प्रकाशक

गिरनार महातीर्थविकास समिति

श्रहेमाभाईका वंडा, उपरकोट रोड,

जगमाल चोक,

जूनागढ. ३६२००१

फोन : ०२८५ - २६२२९२४

E-mail : girnarbhakti@gmail.com

मूल्य : १५ ₹

प्रथम संस्करण : नकल - ५०००

प्राप्तिस्थान :

गिरनार महातीर्थविकास समिति हेमाभाईका वंडा, उपरकोट रोड, जगमाल चोक, जूनागढ – ३६२००१ फोन : ०२८५-२६२२९२४-९४२९१५१९८०२	अखिल भारतीय संस्कृतिरक्षक दल सुभाष चोक, गोपीपुरा, सुरत फोन : ०२६१ २५९०३३७
वर्धमान संस्कारधाम १ला माला, भवानीकृपा बिल्डींग ११२, जगन्नाथशंकर शेठ रोड, गिरगाम चर्च के पास, चर्नी रोड मुंबई – ४००००८ फोन : ०२२-२३६७०९७४ - २२९१५६३६	कमल प्रकाशन ट्रस्ट २७७७, निशा पोळ, झवेरीवाड, रिलीफ रोड, अमदावाद – ३८०००१ फोन : २५३५५८२३, २५३५६०३३

१. एक आत्मा की मनोव्यथा

ओ पतितपावन परमकृपालु परमात्मा !

अत्यन्त व्यथा एवं वेदना से पीडित चित्त के साथ आज आपके समक्ष उपस्थित हुआ हूं। आज तक कई बार में आपके पास आया हूं परन्तु आज मेरा आगमन अनोखे अंदाज में है।

ओ, देव ! मेरी व्यथा को मैं आंखों से ही व्यक्त कर सकता हूं। मुख में से शब्द निकलने से पहले आंखों से आंसूओं की धारा शुरु हो गई है। परन्तु चाहे कुछ भी हो जाय, थोडी दृढता के साथ भी आज मुझे मेरे इन आंसूओंके साथ-साथ टूटे हुए दिल की वेदना शब्दों के द्वारा भी व्यक्त करती ही है। मेरे नाथ ! आप मुझे संभालना, मेरी दर्दीली दास्तान को सुनना। इससे मुझे बहुत आश्वासन मिलेगा।

अहो ! कैसा था, इस आर्यदेश का मोक्षलक्षी बीता हुआ कल ! आर्यदेशका एक-एक युवक, एक-एक युवती ! सभी आर्यत्व की अस्मिता से शोभित थे; जीवन की पवित्रता से प्रकाशित थे और सत्कर्तव्यों की तेजस्विता से जाज्वल्यमान थे।

ब्रह्मचर्य की ताकत से युवक और युवतियाँ परिप्लावित थे। नीति और न्याय की चतुष्कोण रेखाओं से उनके जीवनचित्र अंकित थे, औदार्य से उनका ऐश्वर्य निष्कलंक मोती की तरह चमकता था और सदाचार के आदर्श से उनका यौवन-कुसुम सदा सुगंध से सुवासित रहता था।

जवानी तो इसका नाम ! यौवन भी इसीका नाम ! खुमारी और मस्ती की सदा-बहार ताजगी अच्छे-अच्छे पुण्यवान भोगियों को भी शर्मिंदा करे वैसी थी। इसलिए तो इस आर्यदेश ने अपनी संस्कृति पर हुए आक्रमणों का अविरत रुप से सामना किया है।

इसीलिए तो इस देश की प्रजा करोडों वर्षो से शांति से जी रही थी; और मस्ती से मौत को गले लगा सकती थी। इसीलिए तो इस प्रथा ने अपने सभी क्षेत्रों में अगणित गौरव हासिल किया है, सांस्कृतिक तेजस्विता के सुवर्णचंद्रक प्राप्त किए हैं, मर्दानगी भरे खेल खेलकर परम वीरचक्र प्राप्त किए हैं।

परन्तु..... ओ देवाधिदेव ! में अभागी !

इसी आर्यदेश की धरती का बालक !

इसी आर्य प्रजा का बीज !

इसी आर्य संस्कृति की संतान !

मेरे सभी पूर्वजों की उज्जवल यशोगाथा पर में एक काला कलंक! प्रभो ! मेरी कथा सुनना ! भले ही यह कलंककाली बनी

हो फिर भी सुनना। बीच में मुझे मत छोडना... यदि आप मुझे छोडेंगे तो इस पूरे जगतमें मेरा कोई आधार ही नहीं रहेगा।

इसीलिए कहता हूँ कि मेरी इस काली कथा को आप सुनना..... इसके बाद मुझे आपसे कुछ माँगना है।

क्योंकि याचक बने बिना इस पापात्मा का दूसरा कोई विकल्प ही नहीं है। हे त्रिभुवनपति ! सुनिए मेरी अश्राव्य कथा !

इस जगत में मेरा जन्म हुआ और शुरुआत के ५-५ वर्षो में मैंने एक भी काला काम नहीं किया। कालिमा को मैंने समझा भी नहीं। वह तो निर्दोष बाल-कुसुम था। पाप क्या है ? इसकी मुझे गंध भी नहीं थी। वासना की भी समझ नहीं थी।

मुझे अच्छे अच्छे कपडे पहनाये जाते थे। खाने पीने की स्वादिष्ट सामग्री मिलती, खेलने की भरपूर सामग्री उपलब्ध थी ईसी लिये मेरा एक छोटा सा मित्रमंडल बना। ९-१० वर्ष की उंमरमें में सीनेमा का शोखीन बन गया। गलत मित्रोका संग हुआ। और यहां से ही मेरे अध:पतन की शुरुआत हुई। मैं स्वच्छंदी व उद्धत बन गया। एक दिन मेरे उद्धत मित्र ने मेरे जीवन को दुराचार-सेवन से कलंकित किया।

समय के साथ विषय का कुतुहल बढता गया और मैं वासना के कीचड में डूबता गया। मेरी उम्र धीरे धीरे बढने लगी परन्तु मेरा पतन रोकेट की रफतार से होने लगा।

दुष्ट मित्र, प्रणय कथाएँ, मोबाईल, फेशबुक, नेट, चेटींग, ब्लू सिनेमा और सहशिक्षण ने मेरे जीवन पर स्टीम-रोलर का काम किया। निर्दोष एवं पवित्र जीवन तहस नहस हो गया ।

माता-पिता की मेरे जीवन पर जिस जागृत नजर की जुरुत थी, उसके अभाव में मैंने अपना जीवन खो दिया । वडिलों की तरफ से मुझे किसी भी प्रकार के धर्म के संस्कार नहीं मिले, माननीय जीवन के नींव की समझ भी नहीं मिली, सौजन्य जैसी वस्तु से मैं अनजान था, ब्रह्मचर्य का महत्त्व मुझे किसीने भी नहीं समझाया । राम-सीता अथवा भीष्मपिता इस धरती के कैसे महापुरुष थे, इस बात से मैं पूरी तरह से अपरिचित था ।

कभी मैंने धर्मकथा नहीं सुनी, कभी धर्मस्थान में नहीं गया । संतो का समागम नहीं मिला । भगवंतो की भक्ति भी नहीं मिली ।

जिसे हम 'सोसायटी' कहते है, हमारी उस सोसायटी में शढ, स्वार्थी, विलासी एवं विषयान्ध लोग ही भरे हुए थे । ऐसी स्थिति मे मैं अपने जीवन के सुनिर्माण की आशा भी कहाँ से रखूं ?

यदि खेत में बीज को बोने के बाद सुंदर फसल के लिए पुरुषार्थ न किया जाय तो उस खेत में पुरुषार्थ के बिनाही सहजता से घास तो उग ही जाती है। मेरे जीवन-खेत की भी ऐसी ही दुर्दशा हुई, अनादि के सहवासी, कुवासनाओं की घास स्वतः उग निकली ।

मेरा जीवन, खेत अथवा बगीचा न बनते हुए घास का एक खंड बन गया ।

बस..... बाद में मोक्ष के आदर्श बिना, सद्गति की चिंता बिना, मरण की समाधि के लक्ष्य के बिना, जीवन मे अशांत बना, वासनाओं की अग्नि भडक उठी ।

मैं व्यवहार में कभी अच्छा नहीं रह पाया, मेरी आंख हमेशा विचारों से ग्रस्त रहती ! मेरा हृदय सदा वासना से भरा रहता । मेरे हाथ सदा वासना के पापके दाग से कलंकित रहते ।

हे भगवान ! जिसने आत्मा को ही नहीं जाना हो उसकी क्या दशा हो ? मैंने आत्मा जैसी वस्तु ही नहीं सुनी थी । जिसके कारण जड का राग, जड की भक्ति एवं जड की मैत्री आसानी से हो गई।

हजारों वासनाये मेरे अंदर भडक उठी । वे पिशाचीनी बनकर मुझसे अपना भक्ष्य मांगने लगी । मैं अपने पुण्य के अनुसार भक्ष्यप्राप्त करता रहा और उसे देता रहा ! लेकिन अफसोस ! इससे तो उसकी भूख एवं मांग बढ़ती ही रही।

मैं तो दिन रात अतृप्त रहने लगा । कुल, जाति, भाई, बहन..... ओ मेरे नाथ ! मेरे पास किसीका भी विवेक नहीं रहा । यह कहावत सच हुई : 'इश्क न देखे जात, कुजात......'

महाराजा ययाति की तरह मैं सदा अतृप्त ! जैसे जैसे वासना असह्य बनती गयी वैसे वैसे मैं उसे मारने के लिए सभी अशिष्ट उपाय करने लगा । परन्तु परिणाम स्वरुप वासना और ज्यादा बढ़ती गयी एवं विकृत भी होने लगी ।

वासना के कुछ स्वरुप ऐसे होते हैं जो समाज को बहुत मान्य होते है, जो बहुत ही शिष्ट कहे जाते हैं, जिसे सरेआम भोगा जाता है। ऐसे स्वरुप में कर्णप्रिय संगीत का श्रवण, सुगंधी द्रव्यो का सेवन, स्वादिष्ट खाद्य पदार्थो का भक्षण आदि मुख्य होते हैं । इसे कोई पाप नहीं मानता । इसीलिए सभी मिलजुलकर इस सुधरे हुए अमर्यादित पाप का सेवन करते रहते हैं । और इस तरह दमित वासनाओं को शान्त करने का मिथ्या प्रयास करते हैं । मैं भी सिनेमा घर एवं होटल में बहुत गया । बहन कहकर मैंने वार्तालाप का प्रारंभ किया और उसका अंत तो बहन को.. ओ; मेरे नाथ ! क्या कहूं ? मेरी दमित वासनाओं ने एक भी घर निष्कलंक नहीं रहने दिया । फिर चाहे वह मामा का घर हो, बुआ का घर हो, मित्र का घर हो या लौकिक शिक्षक का ?

मेरे जीवन का प्रत्येक खंड पाप की विष्टा से भर गया एवं अंत में उभर आया ।

में रुप से रुपवान रहा । और इसी रुप ने मुझे कुरुप बनाया !

मैंने नारी का रुप ही देखा । इसीलिए मैं कुरुप बना । यदि मैंने इस रुप के नीचे छुपी मांस, विष्टा औरर मूत्र आदि की कुरुपता को देखा होता तो मेरी यह कुरुपता मुझे कभी देखने नहीं मिलती बल्कि मेरे बाह्य और अभ्यंतर रुप में अनुपम लावण्य खिल उठता ।

आज तो मैंने अपने अब्रह्मचारी अंग में से निकलती बदबुओं को पफ - पाउडर से दबा दिया है ।

तन-बदन के बीभत्स अंगो का मैंने तरह-तरह के मेक-अप और वस्त्रों से ढंका है ।

मेरी वाक्छटा ने एवं मेरे कृत्रिम हास्य और तरंगी स्वप्नों ने मेरी अंदर रही हुई निःसत्त्वता और निर्माल्यता को छुपाया है ।

मैंने समाज में आगेवान के रुप में बहुत इज्जत एवं शोहरत प्राप्त की है लेकिन यदि समाज को मेरी इच्छाओं एवं वासनाओं की जानकारी मिल जाय तो सभी मेरा तिरस्कार करेंगे । ओ त्रिलोकगुरु ! यह सारा दोष मेरा ही है । परन्तु मैं यह बात तो अवश्य कहूंगा कि जिस समाज में, जिस वातावरण में और जिस घर में मेरा लालन-पालन हुआ है, वहां के किसी भी वकिलने, समाजचिंतकने, धर्मगुरुने, शिक्षक ने और मातापिता ने मेरे जैसे खराव व्यक्ति की संभाल नहीं की । हम छोटे से बडे तो हुए परन्तु जन्मोजन्म के शुभ संस्कार के हमारे बगीचे को कोई वनमाली नहीं मिला । हमारे जीवन की बागडोर किसीने भी हाथ में नहीं ली ।

हमें स्कूल में पढने तो भेजा था परन्तु वह शिक्षण था भविष्य को निर्माल्य बनानेवाला, तेजस्वी को निस्तेज बनानेवाला; हेतुहीन, लक्ष्यहीन, आदर्शहीन गुलामों का । ऐसे शिक्षण में हम मातापिता का उपकार कैसे मानें ?

जिस तरह का जीवन निर्माण करना था, प्राथमिक १६ वर्ष में हमारे जीवन को संस्कारो से जिस तरह सुवासित करना आवश्यक था उस तरह का कुछ भी नहीं बना । हम माता-पिता के होते हुए भी अनाथ

ही रहे । हमारा कोई नेता नहीं, हमारी कोई नीति नहीं, हमारा जीवन सूत्र नहीं, हमारे जीवन का कोई आदर्श नहीं ।

इसीलिए हमने अपने मनचाहे ढंग से नृत्य किए, खेल खेले। और इसी खेल-कूद में हमने हमारे जीवन की बुनियाद का सत्य, देह का राजा वीर्य और सामाजिक प्रतिभा का निर्माण - इन तीनों को खो दिया ।

निरंजन ! इस मांसपिंड को जन्म देनेवाले मातापिता, शिक्षण देनेवाले शिक्षक आदि भले ही उपकारी होंगे परन्तु संस्कार निर्माण की घोर अवगणना भी इन्होंने ही की है उसका क्या ? क्या यह बात उन्हें जोरदार उपालंभ देने लायक नहीं है ।

इनमें से किसीने भी हमें अनाचार के खूंखार रस्ते पर जाने से रोका नहीं । चेतावनी भी नहीं दी और इसके कटु परिणाम के बारे में भी नहीं बताया ।

रे ! वे ही हमें अंगुली पकडकर पाप के रस्ते पर ले गए । मनोरंजन के नाम पर ! खाली समय के सदुपयोग के नाम पर !

जहां हमारा पूरा जीवन ही बर्बाद हो गया वहाँ मनोरंजन क्या और सदुपयोग क्या ?

यदि बाल्यावस्था से ही माता-पिता ने अथवा दादा-दादीने हमें राम-सीता की कथायें कही होती तो ? भीष्मपितामह के सत्त्व को समझाया होता तो ? थोडे बडे होते ही **'मरणं बिन्दुपातेन, जीवितं**

बिन्दुरक्षणात् !' सूत्र का पाठ कर्णगोचर किया होता तो ? शादी होते ही 'परस्त्री मात समान' का आर्य-आदर्श अच्छी तरह से समझाया होता तो ?

रे ! तो क्या घर घर के हम ऐसे बदतमीज और बेशर्म युवक थे कि उन बातों की हम घोर अवगणना करते ? अथवा हंसी उडाते ?

परन्तु बुनियाद में ही कच्ची ईंट-चुना भरे गए । निर्माण में ही हमारी उपेक्षा की गयी ! राम के भरोसे पर हमारा विकास सौंप दिया गया ।

इसीलिए ही अत्यन्त विकृत जीवन की कलंक कथा के काले इतिहास का सर्जन हो गया ।

खराब बनने में निमित्त बने कोई और ! फिर भी खराब कहलाए हम !

सभीने हमें नास्तिक कहा, नीच समझा, नालायक जाना, ऐसे अनेक विशेषणों से हमे नवाजा गया।

परमपिता परमात्मा ! सचमुच मेरी दशा भी ऐसी ही थी । मैं इन्हीं विशेषणों के योग्य था । क्योंकि प्यास, प्रेम, प्रेमभंग, आघात, पुनः प्यास, प्रेम, प्रेमभंग और आघात के विषचक्र में मैं पूर्णरुप से फंसकर चूरचूर हो गया था ।

मैं अत्यन्त उन्मादी बन गया था । मेरी वासना भयजनक सारी बातों का उल्लंघन कर चुकी थी । अपनी वासना को शांत करने के

लिए मैंने नग्न चित्रों की आल्बम बनायी, एकांत को अपना साथी बनाया. अंधकार को जीवन बनाया, होटेल और क्लब को घर बनाया और डोक्टरों को अपना वोंचमेन बनाया। 'यस मेनो' का मेरा मित्रमंडल था, हेरोइन के नशे के जैसे मेरे जीवन की बर्बादी में ये सभी हिस्सेदार थे ।

कृपालु ! इस तरह आंतरिक जीवन से में मरता गया और अनेको को मारता गया। अनेको के शील और सौभाग्य को भी खण्डित करता गया ।

ओ अशरणशरण ! मैं रुप की अग्नि का पतंगा बना। उस अग्नि में गिरकर मैं भस्म होता ही रहा ।

ओ भगवान ! केन्सर के दर्दी की तरह वासनाओं की पीडा से मरते हुए मैंने अपनी सैंकडों मौत देखी है । और हाय ! कैसी यह जंजाल ! कैसा यह मानसिक तनाव ! और कैसी यह वासना की पीडा से तडपती, करवट बदलती, निंद हराम बनाती मेरी कंगाल काया ।

मैं कहाँ कहाँ वासना के पापो में नहीं फंसा ? विजातीय तक दौडा, सजातीय में तृप्ति पाने के लिए अपना होश खो बैठा और सजातीय में बेहाल बना !

हाय ! कैसे कैसे कुकर्म किए !

मैं दुकान गया तो लूटेरा बना। मेरी वासनापूर्ति के लिए, मेरे पफ-पाउडर के लिए, मित्रोकी मिजबानी के लिए मुझे पैसों की जरुरत तो

पडती ही थी । इसलिए में बिना बुकानीवाला लुटेरा बना । अपने ही ग्राहकों को मैंने लूंटना शुरु किया । दिन के उजाले में... सरेआम...... सेठ होने के नाते.... दंभी लिबास में ।

फिर भी मेरी धन की लालसा तृप्त नहीं हुई । रे ! मुझे तो प्रति रात्रि १०००-१०००की नोट भी कम पडती थी । क्योंकि मेरे साथियों के राजशाही खर्चों को पूरा करने के लिए उन्हें मेरे जेब के पैसों की जरुरत पडती थी और वासना का में अंधा कीडा बना, बुद्धि से भ्रष्ट बना बादमें तो उसके चरणों में धन के ढेर करुं तो इसमें क्या नवीनता हो सकती है ?

परन्तु व्यापारी लूंट मेरी इच्छापूर्ति के लिए कभी पर्याप्त नही बनी ।

इतनें में मुझे किसीने एक देवमंदिर बताया, मान्यता का तत्त्वज्ञान समझाया । और..... और..... ओ मेरे नाथ ! मैं उस मंदिर में गया । मैं याचक बना । मैंने वासना के साधन मांगे, धन मांगा, लोटरी-टिकिट के नंबर मांगे.... याचक बनकर में...... और मेरे जैसे लाखोंने कई धर्मस्थानो को अपना याचना केन्द्र बनाया ।

मैं इतने में ही नही रुका । एक दीन किसीने मुझे धर्मगुरु बताए। मैंने उनकी चरणरज ली, मैंने उनकी भक्ति की इससे वे मुझ पर प्रसन्न हुए और किसीने मुझे एक धागा बांधा, किसीने तावीज बनाकर दिया, किसीने पानी पिलाया, किसीने मंत्र दिया ।

मैं भी यह सब आंखे बंद करके करता ही रहा । परन्तु मैं तो

पुण्यहीन था। पाताल में यदि पानी ही न हो तो फिर ट्यूबवेल लगाने से क्या फायदा ?

ओ जगदीश ! जन्म से ही मिली जीवन की चादर को मैंने दाग लगाया ! अमावस की रात से भी अधिक काली बनायी।

प्रशस्त और अप्रशस्त के बीच की लक्ष्मण रेखा को मैंने कभी नहीं देखा और मुझे देखना आया भी नहीं। इसीलिए अच्छे गिने जाते संबंध तो वास्तव में अच्छे ही थे, उन्हें मैंने दूषित भावना से स्पर्श किया और अंत में ये खराब बने और दोनों पक्ष के जीवन बर्बाद हुए।

अहा ! मैंने कितनों के जीवन बर्बाद किए होंगे ? कितनों को फँसाया होंगा ? कितनों को लालच दि होगी ? सचमुच ! मैं कभी दिल से किसीका भाई बना ही नहीं ! कभी किसीको अपनी बहन भी नहीं बनायी। मैं दिखने में अलग रहा और हकीकत में अंदर से कुछ और ही था।

दंभ की कला में मैं इतना माहिर हो गया हूं कि आज तक भी मुझे कोई पकड नहीं पाया।

यदि कभी मेरे पाप खुले हो जाए तो एक ही पल में मैं इस समाज से साफ हो जाउं।

यह तो बडी कृपा है पाप कर्म की कि पाप कर्म उदय में आते हैं तो भी जिस क्षण पाप होता है उसके दूसरे ही क्षण पाप कर्म उदय में नहीं आते और पाप कर्म जब भी उदय में आते हैं तब ललाट पर

उसकी भूतकालीन पापकथा का कोई लेखा-जोखा नहीं होता । यदि ऐसा होता तो पूरा जगत एक-दूसरे को धिक्कारता, एक-दूसरे को तिरस्कार करता ।

ओ अविनाशी देव ! एक काव्यपंक्ति मुझे याद आती है, ऐसा लगता है कि यह मेरे लिए ही बनायी गयी है, **''मों सम कौन कुटिल खलकामी, जिसने यही तनु दियो, ताही बिसरायो, ऐसा निमकहरामी... मों सम.....''**

मेरी इस वासना की भयानक पीडा का ही यह दूसरा स्वरुप प्रगट हुआ है जो शायद आप और मैं ही जानते हैं । यह है राजनीति का तूफान ।

हडताल, मारामारी, लूंटफाट, तूफान, आग और पत्थर से मारामारी..... आदि दमित वासनाओं का ही विकृत फल है ।

जहां काम होता है वहाँ क्रोध तो होता ही है न ? **जहाँ राग वहाँ आग !** किसी भी प्रकार की अतृप्ति अंत में तो कषाय में ही परिणमन होती है न ? कषाय का किसी भी प्रकार का उग्र स्वरुप वासना के मंद मंद परन्तु सतत मानसिक संघर्षो का ही परिणाम है न ?

मेरे देवाधिदेव ! जगत को यह सत्य पता चला है या नहीं यह तो मैं नहीं जानता परन्तु इस सत्य की संपूर्ण प्रतीति मुझे तो हो गयी है ।

सभी अप्रशस्त कषाय वासनानदी के विनाशक प्रवाह ही हैं ।

माता-पिता अथवा भाई-बहन को पीडा देने की घर की धमाल से लेकर राष्ट्रीय अशिष्ट सभी तुफानों की बुनियाद में वासना की पिशाचिनी ही बैठी है । यह निर्विवाद सत्य है ।

ओ जगदीश्वर ! मेरे जीवन में आए इस तूफान ने मेरे तन-मन की सभी शक्तियों को नष्ट कर दिया है । गुप्त रोगो ने भी इस काया में अपना डेरा जमाया है । पौष्टिक तत्त्व, कायाकल्प और कामोत्तेजक औषधियों के प्रलोभन के कीचड में तो मैं पूरी तरह से फँस गया हूँ। सैंकडों रुपए खर्च हो गए फिर भी मुझे पुनः अपना तंदुरस्त आरोग्य प्राप्त नहीं हुआ बल्कि दिन प्रतिदिन आरोग्य नादुरस्त होता ही जा रहा है । समय से पहले ही बुढापा आ गया हो ऐसा लगता है । थोडा सा चलते ही शास फूलने लगता है, शरीर का खून सूख गया है, चेहरा निस्तेज बन गया है, बुद्धि शक्ति नष्ट प्रायः हो गयी है, विचार शक्ति अब नहीं रही, स्मरण शक्ति संपूर्ण रुप से खतम हो गयी है ।

मानसिक सत्त्व नष्ट हो गया है । **जिसके जीवन में अब्रह्म की आंधी होती है उसकी वाणी सभी को अप्रिय बनती है, उसे इच्छित वस्तु की प्राप्ति नहीं होती'** ऐसी आगमवाणी मेरे जीवन में संपूर्ण रुप से घटित हुई हैं ।

हाँ, मेरे ही पाप के कारण मेरे घर के सदस्य मेरे साथ जंग करने के लिए तैयार हो जाते हैं । मेरी सही बात भी कलह का कारण बन जाती है । हाँ, मुझे अब किसी भी तरह का बचाव नहीं करना है । क्योंकि यह मेरे भूतकाल के पापों का फल है, मेरे ही दुराचारी जीवन

की यह सजा है। इसे तो मुझे भोगना ही पडेगा। लेकिन कभी-कभी तो हिम्मत हार जाता हूँ। माताजी, पिताजी, छोटा भाई सभी एक साथ लडाई करने आते हैं तब ऐसा विचार आता है कि ऐसा कभ तक सहन करना। आखिर सहनशीलता की भी तो मर्यादा होती है न ?

लेकिन, सैंकडों बार अब्रह्म के अनाचारों का सेवन करने के बाद यह सहन करने के सिवाय दूसरा कोई विकल्प शेष नहीं रहता'..... इस परम सत्य को मुझे स्वीकार करना ही पडेगा।

ओ जगतबंधु ! यह तो मैंने अपने काले भूतकाल की बात की है। आप तो सर्वज्ञ हैं, सर्वदर्शी हैं। मेरे जीवन की प्रत्येक बात आप अच्छी तरह से जानते हो। अब मुझे अधिक बताने की आवश्यकता नहीं है।

अब मैं मुख्य बात पर आता हूं।

मेरे ही पापों ने मेरे जीवन को दुःखमय बना दिया है। मैं आधि (मानसिक चिंता), व्याधि, उपाधि से ग्रस्त हूं। संसार के स्वार्थी स्वजन और स्नेहीजन के ताप-संताप से जल रहा हूं। चारों तरफ से धिक्कार और तिरस्कार पात्र बना हूं।

लेकिन.... लेकिन मैं यह दुःख रोने के लिए आपके पास नहीं आया। इन दुःखों को तो मैं किसी भी तरह भगा दूंगा। यदि ये दुःख नहीं भागेंगे और मेरे जीवन की धरती पर अड्डा जमाकर रहेंगे तो भी मुझे उसकी चिंता नहीं, व्यथा नहीं, क्योंकि मैं यह बात अच्छी तरह

से समझ गया हूं कि पापी को उसके पापों का फल मिलना ही चाहिए, सजा मिलनी ही चाहिए। यदि सजा न मिले तो उसे स्वयं ही फाँसी के फंदे पर चढ जाना चाहिए। स्वयं को बिगाडनेवाला और अनेकों में पाप का संक्रामक रोग फैलानेवाले मेरे जैसी पापात्मा के लिए कोई भी सजा पर्याप्त नहीं है। मुझे मरण के वक्त तडपना पडे या परलोक में नरक में अत्यन्त दुःख सहन करना पडे, एक बार...... सौ सौ बार.... उसकी भी मुझे चिंता नहीं।

जिसने घर के आंगन में बबूल के बीज बोए हो, उसे तो कांटे ही देखने पडेंगे, कांटे ही खाने पडेंगे, इसमें कोई विकल्प नहीं।

इसीलिए मैं अपने पापों से लगी आग को बुझाने नहीं आया।

लेकिन ओ अशरणों के शरण! ओ अनाथों के नाथ। ओ निराधार के आधार! ओ पतितों के पावन! ओ तीन जगत के प्राण, विश्वमात्र के प्राण, ओ प्रभु! मेरे आत्मउद्धारक! मेरी पापी वासनाओं की आहुति को ठंडी करो..

वासनाओं की अगन ज्वालाओं को ठंडी करने की शक्ति पूरे विश्व में आपके सिवाय किसी में भी नहीं है, कहीं भी नहीं है।

विविध दुःखों को दूर करनेवाले वैद्य, हकीम, वकील, माता-पिता, हजाम आदि इस जगत में है, परन्तु चित्त में जलती वासनाओं की शांति करने का सामर्थ्य पूरे विश्व में मात्र आपके ही पास है।

आपकी आत्मशक्ति का, आपके अनुग्रह का स्त्रोत यदि मुझ पर

बहे अपना एक बूंद भी यदि मुझ पर गिर जाय तो ये अगनज्वालायें और असह्य दाह संपूर्णतया शांत हो जाय ।

दो दो ओ मेरे देव ! अनुग्रह दो, शक्ति दो ।

मैं तडप रहा हूँ अनुग्रहपात के लिए !

मैं रो रहा हूँ अमीपात के लिए !

मैं बेचैन हूँ शक्तिपात के लिए !

ओ माँ ! मैं बहुत त्रस्त हूँ वासनाओं की दाहक पीडा से ! आप मुझे मुक्ति का सुख न देना चाहो तो मुझे नहीं चाहिए। मेरी दुर्गतियों के दुःखों का आप निवारण नहीं करना चाहते तो मेरा आग्रह नहीं है। मुझे मरण में समाधि नहीं देनी हो तो मुझे इच्छा भी नहीं है । यदि आपकी इच्छा होगी तो भवोभव भटकता ही रहूँगा और कातिल दुःखों को सहर्ष सहन करुँगा । मेरे पापों का फल भोगता रहूँगा ।

हाँ.... आपकी इच्छा होगी तो रोगों की भयंकर पीडा से तडप-तडपकर बार बार मरता रहूँगा और आपकी इच्छा होगी तो इस जीवन में भी अपने दास और नौकरों की लात खाउंगा, लेकिन......

पशु का जीवन जीउंगा, दिन-रात भूखा रहूँगा.. ये सारे दुःख सहन करने की इस पापी की तैयारी है, लेकिन वासनाओं की पीडा और उसके दुःख अब मुझसे सहन नहीं होते । अमूल्य मानव जीवन की समझ आने के बाद एक पल के लिए भी मैं अपने पापी जीवन का अंशतः भी एक परमाणु जितना भी पुनरावर्तन करने के लिए अत्यन्त लाचार हूं।

पहला सत्य....पाप ! नहीं...मुझे करना ही नही है। दूसरा सत्य.... मेरा पुरुषार्थ भी मंद हो वैसा नहीं है। मुझे तो अब कुछ करना ही है।

है कोई उपाय, पाप को...... पाप वासनाओं को संपूर्णतया नाश करने का उपाय ?

हाँ.... एक उपाय है, जो मैंने अच्छी तरह से जान लिया है।

वह है...

आपका अनुग्रहपात ! अमीपात ! शक्तिपात ! एक बूंद ही काफी है।

विष का कुंभ पीनेवाले को पुनः जीवन दान के लिए अमृत की एक ही बूंद काफी है। अमावस की रात्रि के अंधकार को हतप्रभ करने के लिए टोर्च का एक ही प्रकाशकिरण काफी है।

हजारां वर्षो के लाखों सर्जनो का विसर्जन, एक ही 'एटमबोम्ब' पल में ही नाश कर सकता है।

ओ प्रभु ! दो.... दो.... इस दयापात्र जीव को आपकी करुणा दो और इसे अपने अनुग्रह से, आंखों की अमी से, परमात्म शक्ति से नहला दो।

अब यदि मेरी यह प्रार्थना निष्फल जायेगी तो इस धरती पर मेरा जीना मुश्किल हो जाएगा।

ओ प्रभु ! मैं आपका बालक हूँ, आपका ही दुलारा हूँ।

दया करो.... कृपा करो..... अनुग्रह करो... और कुछ भी माँगने की इच्छा नही है। मात्र जरुरत है, पापवासनाओं की पूर्ण शांति की....

इसीलिए मैं आपके पास आया हूँ...... क्योंकि आपके सिवाय त्रिभुवन में यह शक्ति और किसीके भी पास नहीं है।

ओ कृपालु ! कृपा करो, ओ दयानिधि ! दया करो, ओ पतितपावन ! इस पतित को पावन करो।

* * *

एक करोड रुपए का दान करना आसान है, जीवनभर ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना आसान है, जीवनभर मासक्षमण के पारणे मासक्षमण करना भी शायद आसान होगा।

लेकिन जिसे कोई जानता न हो वैसे भी हरतरह के पापों का सद्गुरु के पास निवेदन करने की हिम्मत करना बहुत मुश्किल है। जिसका मोक्ष नजदीक हो वही पुण्यात्मा यह काम कर सकता है।

२. ओ पुण्यात्मा ! तुम मत रोना !

निर्मल स्फटिक जैसा आतम !

सिद्धिपद का अधिकारी !

अनंत चतुष्टय का स्वामी !

लेकिन अनादिकाल ! अनंत जन्म ! अनंत की रखडपट्टी !

सर्जन किया इसने घर का, कुटुंव-परिवार का ! इसने बनाया शरीर, बांधे कर्म और किए राग-द्वेष ! घर, परिवार, शरीर, कर्म और रागादि - पाँच पाँच कैदखाने में जकडा हुआ और मिला हुआ अमूल्य मानवभव व्यर्थ गया । इस जीवन का समय फिज़ूल गया, पुण्य खतम हुआ ! शक्ति बर्बाद हुई । बुद्धि नष्ट हुई !

रागादि के कारण दुर्लभ मन का दुरुपयोग हुआ, तन जीर्ण हुआ ! भव बिगडा अरे ! भवोभव बिगडे, हाय ! जिन दुर्गतिओं से बडी मुश्किल से बाहर निकला था उन्हीं दुर्गतियों में यह मानवदेहधारी आसानी से चला गया । जहाँ पर प्रकाश का एक किरण भी नहीं है वैसी अंधकारमय क्षितिज में अनंत की यात्रा का प्रारंभ हुआ ।

इस तरह अनेकों से धिक्कारा गया, स्वजनों से तिरस्कृत बना हुआ, दुर्जनों से मृत्यु को पाया हुआ, स्नेहिजनों से निंदित, दुर्भागी होते हुए भी महाभाग्यशाली परमतारक तिर्थंकर भगवंतो की निरंतर बरसती असीम करुणा की महाधारा से आर्द्र बनकर इस भवन में पुन: मानवजन्म प्राप्त किया। दिन-प्रतिदिन वर्धमान पुण्य से मिले आर्यदेशादि यावत् जिनेश्वर भगवंतो की आज्ञा का कालानुसारी सुंदर पालन से वासित और सुवासित परिवार में उसे जन्म मिला है ।

अनंतकाल के अनंत संकटों से छूटकर उसने जिनमंदिर, जिनमूर्ति के परम पवित्र दर्शन प्राप्त किए। सद्गुरु और साधर्मिको का संग भी प्राप्त हुआ ।

मंत्राधिराज के पाठ से पवित्र बने, करेमि -भंते की नित्य प्रतिज्ञा से गौरवान्वित बने, दान-शीलादि धर्मो से मुक्त कुल में जन्म प्राप्त करके इस आत्मा ने बहुत कुछ प्राप्त कर लिया है ।

परन्तु अब इसकी कर्मकथा शुरु होती है ।

अनादिकाल से खेला गया विचित्र खेल ! रागादि की चाल ! दुर्भावग्रस्त मत ! कुटिल जीवन ! ये सभी इकट्ठे होकर उसके इस मानवजीवन पर भूखे शेर की तरह टूट पडे ।

और इतना ही नही, छोटी उम्र से ही कुमित्र का कुसंग और कुतूहल वृत्ति का जागरण होते ही वह खराब निमित्तों का शिकार बन गया ।

हाँ....... इसमें उसने अपना सौंदर्य खो दिया, तेज गवां दिया !

हा ! कैसा आश्चर्य ! श्रावक-श्राविका माता-पिता से, जिनमंदिरो से, सर्वविरतिधरों से और देशविरतिधरों से परिवृत होते हुए भी मोहराजा ने उस पर हमला किया और उसे वासना में आसक्त बना दिया ।

एक तरफ विकारों से उसका हृदय भर गया और उसके प्रत्याघात के रुप में दूसरी तरफ उसके शरीर का संपूर्ण यौवन साफ हो गया।

कई पाप कई बार इसके द्वारा हो चुके है । जिसकी कोई नोंध नहीं, याद नहीं परन्तु पुण्योदय से एकबार किसी सत्पुरुष के समागम से उसे पता चला कि जिंदगी बर्बाद हो गयी है ।

जागृति आते ही वह जोर-जोर से रोता है। आंखों पर सूजन आ जाती है। वह पुकारने लगता है कि मुझे कोई बचाओ, मेरा कया होगा ? इस भव में थोडे समय में ही मेरे शरीर में आनेवाले भयानक रोग मुझे दिखाई दे रहे हैं, समय से पहले ही बुढापा दिख रहा है, तडप-तडपकर होनेवाली मृत्यु भी नजर के सामने है ! और..... ओह ! अनंत दु:खों से भरी दुर्गति ! रे ! मुझसे तो देखी भी नहीं जाती ये भयानक नरक ! कितने भयंकर है सूअर आदि के अवतार!

नहीं....... नहीं......... अब नहीं करने पाप ! आज से ही बंद ! लेकिन मेरे भूतकाल के पापों से मुझे कोई बचाओ, मेरा शुद्धिकरण करो, एक बार मुझे नवजीवन दो, एकबार मुझे नया जीवन जीने का अवसर दो..... बादमें मैं अपनी सफेद चादर को कभी पापों से नहीं बिगाडूंगा ।

नही...... कभी नहीं........ हाय ! उन प्रत्येक क्षण के पापों ने

मेरा सर्वतोमुखी अध:पतन किया है । अब तो मैं स्वप्न में भी उसका संग नहीं कर सकता ।

यह है अनेक पापों से जीवन को बर्बाद किए हुए किसी आत्मा की, (शायद यह संवेदन पढनेवाले वाचक की स्वयं की ही) आत्मकथा ।

अनादिकाल के काले संस्कार और वर्तमानकाल के कुनिमित्त किसी आत्मा की एसी बर्बादी करे तो इसमें शास्त्रज्ञ पुरुषों को लेश मात्र भी आश्चर्य नहीं होता । कुसंस्कारों का अनादिजोर और कुनिमित्तों का वर्तमान तूफान ऐसा कुछ करे, यही स्वाभाविक है । किसीको यदि ऐसा कुछ भी न हो तो वही जगत का अग्यारहवां अजूवा है ।

पाप होना यह आश्चर्य नहीं है लेकिन किए हुए पापों का, हो चुके पापों का खुले दिल से, सरल हृदय से, जिस तरह माता के पास बालक सरल बनता है उसी तरह सद्गुरु के पास पूरी बात बताना ही इस जगत का अनोखा आश्चर्य है ।

यदि पाप करते वक्त शरम नहीं रखी तो पापों का प्रायश्चित करने की क्षणों में शर्म क्यों ? संकोच किस लिए? घबराहट किससे ?

यह तो पाप करने के हीन भाग्य के साथ मिला है सद्भाग्य कि जिसके कारण जिनधर्म और जिनशासन मिला है । जिसके द्वारा किए हुए पापों की शुद्धि-संपूर्ण शुद्धि के द्वारा नवजीवन की प्राप्ति हो सकती है। यदि यह जिनशासन नहीं मिला होता तो किए हुए पापों का अंजाम

इतना भयंकर आता कि जिसकी कल्पना मात्र से ही हृदय कंपित हो जाता । दिलों-दिमाग के होश उड जाते ।

शर्त मात्र इतनी ही है कि **जिनके पास संपूर्ण पापों का निवेदन करना है वे गुरु गीतार्थ, संविग्न और अत्यन्त गंभीर होने चाहिए । देशकालानुसारी शास्त्रचुस्त जीवन जीनेवाले और ससूत्र प्ररुपक होने चाहिए ।**

चाहे जैसे विकट संयोगों में भी किसीके द्वारा की गयी बात किसी और को किसी भी तरह से न करे इस हद तक गंभीरता उनमें होनी चाहिए । वे पाप सुनते हुए उनके हृदय में किसी भी तरह का विकार उत्पन्न न हो और आलोचना करनेवाले व्यक्ति पर लेश मात्र भी तिरस्कार या धिक्कार भाव पैदा न हो अपितु "यह पुण्यशाली कितना पापभीरु आत्मा है कि स्वयं के पापों की सूक्ष्मता से बात करके अथवा लिखकर सर्वथा शुद्ध बनने के लिए अत्यन्त तत्पर है । धन्य है इस पुण्यशाली आत्मा को ! यह आत्मा बहुत-बहुत धन्यवाद पात्र है ! इसने तो शुद्धि करके कमाल किया है ।" इत्यादि शुभ भावों से प्रायश्चितदाता गुरु भावित होने चाहिए ।

यदि ऐसे गुरु न मिले तो ऐसे गुरु की तलाश करने के लिए बारह वर्ष तक देश-पर्यटन करने के लिए शास्त्रकार परमर्षियों ने फरमाया है ।

महानिशीथादि आगम ग्रंथो मे पापों के शल्यों का उद्धार जल्दी से जल्दी करने की जबरदस्त प्रेरणा की गयी है । ऐसे शल्यों का उद्धार

करते हुए अथवा शल्योद्धार करने का विचार करते हुए अथवा शल्योद्धार करने के लिए गुरु के पास जाने के लिए कदम उठाते हुए अनेकानेक आत्माओं को केवलज्ञान प्राप्त होने का उल्लेख किया गया है ।

विशेष रुप से वर्तमानकाल पतन का ही काल हो ऐसा लगता है । आजका धर्मविहीन जीवन, कुमित्रों का संग, खराब वांचन और वडिलो की भी सकारण अथवा निष्कारण संतानों की उपेक्षा आदि के कारण लगभग ७० प्रतिशत जितने संतानों के जीवन अत्यन्त छोटी उम्र में (१० से २२ वर्ष तक) तबाही की ओर मुडे होंगे । वडो के जीवन के विषय में तो क्या लिखना यही पता नहीं चल रहा है ।

सिनेमा, शिक्षण, सहशिक्षण, संतति-नियमन की राजमान्य व्यवस्था, तलाक और गर्भपात के नियम ज्ञातिजाति की व्यवस्था का नाश, समानता-एकता को समग्र प्रजा पर जबरदस्ती अमल करने का कदाग्रह और आहार की गडबडों ने अगणित पापों को पैदा किया है । इनमें से बच सकते हैं मात्र संसारत्यागी ही... वे भी यदि सावधान रहे तो बच सकते हैं । इसके सिवाय यदि कोई बचते हैं तो संसारीजन होते हुए भी अंत:करण से उन्हें अत्यन्त वंदनीय विभूति ही कह सकते हैं।

इस विषमकाल में भी जिन्हें जिनशासन मिला है वे सभी अत्यन्त भाग्यशाली हैं कि यदि वे चाहें तो आज ही उपर्युक्त प्रकार के सद्‌गुरु की शरण लेकर अपनी जीवनशुद्धि कर सकते हैं । यह कोई मामूली सद्‌भाग्य नहीं है । करोडों रुपए का स्वामीत्व मिले तो उससे भी बडा सद्‌भाग्य है इस पापशुद्धि के सामर्थ्य प्राप्ति का ।

जालिम पलो में जिनसे पाप हो गए हैं, ऐसे लोगों ! आप बिलकुल भी हताश मत होना, निराश मत होना, रो-रो कर बैठ मत जाना । जो होना था सो हो गया । अब उसका शुद्धिकरण कर लो ! ऐसे किसी सद्‌गुरु के पास सरलता से स्वच्छ हृदय से बारबार निवेदन करके कुछ भी लिखना या कहना रह न जाय उसकी पूरी सावधानी रखकर, जितना हो सके उतना सब याद करके बता देना........

तुम्हारी शक्ति को पूछकर ही गुरुदेव तुम्हें प्रायश्चित में तप, जाप आदि देंगे । वे जो भी प्रायश्चित देंगे उसे पूरे उत्साह के साथ बढती हुई शुद्धि से, विधिवत् वहन करना ।

तुमने जिस समय प्रायश्चित देने के लिए गुरुदेव से निवेदन किया, उसी समय तुम्हारे कई पापकर्म नाश हो गए होंगे, लेकिन तुम वह तप आदि प्रायश्चित जिस दिन पूरा करोगे उस दिन तो तुम आनंद विभोर बनकर नाचना, क्योंकि उस दिन तुम्हारी पूर्ण शुद्धिहो जाएगी ।

हाँ.... वह दिन तुम्हारे लिए बहुत अनमोल और सुहाना होगा । तुम अपने आपको अत्यन्त भाग्यशाली, आनंदित, गौरवभरपूर एवं स्वाभिमानी मानोगे ।

चाहे जो भी हो...भाई अथवा बहन, माता अथवा पिता, शेठ अथवा नौकर, गरीब अथवा श्रीमंत, रोगी अथवा निरोगी, युवान अथवा वृद्ध, संसारी अथवा त्यागी, सर्व कल्याणकर जिनशासन के द्वारा दिए गए पापशुद्धि के अमूल्य अवसर का सहर्ष स्वागत

करो और धर्ममय नया जीवन, नया पुरुषार्थ, नयी ताजगी, नयी उष्मा प्राप्त करके अभूतपूर्व धर्म पुरुषार्थ करके मुक्ति की मंजिल को जल्दी से जल्दी प्राप्त करने के बीज (पापशुद्धि द्वारा) इसी भव में बो देना ।

धन्य है उन आत्माओं को जिन्होंने सर्व पापों की शुद्धि करके संसार रुपी सागर को, छलांग लगाकर पार कर सके वैसा डवरा वना दिया है ।

* * *

३. ओह ! मेरा भयानक परलोक !

भूतकाल के मेरे कुकर्म ! मेरे द्वारा किए गए काले कार्य ! हाँ..... अब तो उसकी पीडा से मैं बेचैन बन रहा हूँ। अच्छा हुआ कि मुझे पाप की पीडा होने लगी है ! आज तक तो मैं दुःख से ही पीडित था, पाप तो मेरे लिए मीठे-मीठे सुमधुर पेय थे, जिन्हें याद करते ही हृदय आनंदित हो जाता था।

'पाप की पीडा' यही आध्यात्मिक जीवन के सुप्रभात के पूर्व की मंगलक्रिया है।

लेकिन..... अब मुझे भूतकाल के साथ-साथ अपना भविष्य भी दिखने लगा है। गुरुदेव की वैराग्य बरसती वाणी के श्रवण के प्रभाव से मुझे मेरे कलंकित जीवन का भयानक भविष्य स्पष्ट रुप से दिखाई दे रहा है। हाँ..... किए हुए पापों के फल स्वरुप आनेवाले भयानक दुःखों का स्मरण भी मेरे हृदय में तीव्र वेदना पैदा करते हैं और उस वक्त मैं अत्यन्त असह्य वेदना से पीडित बनकर तडपने लगता हूं।

हाय ! इस धरती पर मेरे कलंकित जीवन पर दुःखों के बादल कैसे बरसेंगे ?

मुझे दिखते है वे परमाधामी जो दुर्गंधी, बीभत्स और विकृत अर्थात् बिल्ली के द्वारा फाडे हुए कबूतर के मांस की तरह चाकु से मेरे शरीर के राई जितने छोटे - छोटे टुकडे करेंगे और उस समय मुझे पाप याद दिलाते हुए कहेंगे कि "हतभागी ! डी.डी.टी छांटकर निर्दोष, निरपराधी और दयापात्र जीवों को मौत के घाट उतारते हुए तुम्हें थोडी सी भी दया नहीं आयी न !"

उस वक्त में दर्दभरी पुकार करते हुए बेहोश हो जाउंगा........

कभी-कभी वे परमाधामी मुझे धधकते हुए लोहे के पुतले के साथ जबरदस्ती आलिंगन करवायेंगे और कहेंगे कि विजातीय (स्त्री अथवा पुरुष) के साथ आलिंगन करने में बहुत आनंद आता था न ? ले अब यहां इस पुतली (अथवा पुतले) के साथ आलिंगन कर और अपनी मौज पूरी कर....

उस वक्त मैं अपनी लाचारी की पुकार करुंगा ! हाय ! ओह ! मुझसे यह सब कैसे सहन होगा !

कभी-कभी मैं उस परमाधामी से पानी की माँग करुँगा कि भाई, मुझे थोडा सा पानी दो। "हमारे मानवलोक में किसीको अति भयानक प्यास लगी हो उससे भी अनंतगुण प्यास तो मुझे इस नरक में जन्म लेते ही लगी है। अब मुझसे सहन नहीं होता। मेरी जान जा रही है। मेहरबानी करके मुझे थोडा सा पानी दो।"

और उस वक्त उबलता हुआ सीसे का रस प्याले में भरकर धमधम करता हुआ, पाँव पटकता हुआ, वह परमाधामी मेरे पास आएगा

और "तेरे जैसे नीच और निर्दय के लिए इस दुनिया में यही पानी है । ले पी.... पीना ही पडेगा !" ऐसा कहकर उबलता हुआ सीसा का रस, मुझे राक्षसी पंजे में पकडकर, मेरा मुँह फाडकर, मुझे जबरदस्ती पिलाएगा !

हाय ! मेरी कैसी हालत होगी !

उस वक्त वह परमाधामी मुझे याद करवाते हुए कहेगा कि "बिरादर ! वैशाख महीने की कडक धूप में मध्याह्न के समय तुम्हारे आंगन में आए हुए एक प्यासे गरीब आदमी को पानी पिलाने की उसकी माँग के सामने तुमने अपने चपरासी से उसे लात मरवाकर क्यों निकाला था ?

उसी गरमी के दिनोंमें तुने आईसक्रिम, कोकाकोला, फेन्टा और बरफ आदिका पेयपानकरके गरमीसे छूटकारा पाया था ।

"ओ अधम ! तुमने अपने माँ-बाप को उनके बुढापे के समय में क्यों तकलीफ दी थी ?"

"तुमने अपने मुनीम आदि नौकरों को कितना सताया था ? तुम्हारी नीचता की भी हद है !"

"अब रोना, गिडगिडाना सभी बेकार है। पूर्व में हुई तुम्हारी अनंती मातायें, बहनें, मित्र आदि में से कोई भी यहां तुम्हारी मदद के लिए नहीं आ सकेंगे । तुम्हारे आँसू पोंछने की भी यहां किसीकी ताकत नहीं है ।"

ओह ! कैसे नरक के कातिल दुःख ! ऐसे तो अग्नि में जलने के, हल जुतने के, करवत के मस्तक चीरे जाने के, तलवार

से टुकडे करवाने के.... ओ भगवान ! न जाने कैसे-कैसे भयानक दुःख मुझ पर टूट पडेंगे ।

कितने वर्ष ! कम से कम दस हजार ! जहाँ पल पल मांगु, तो भी मौत नहीं मिलती ।

जहाँ मारनेवाले को मारते हुए कभी थकावट नहीं लगती । यदि थकावट लगे तो भी व्यक्ति बदलते रहते हैं, वहाँ मुझे तो एक पल की भी शांति नहीं ।

जहाँ बार-बार पापों की याद दिलवाकर चित्त में लाखों सांप के एक साथ होते डंख की तीक्ष्ण वेदना सतत चालु ही रहती है ।

जहाँ मेरे शरीर के राई जितने टुकडे करने पर भी दूसरी ही क्षण वे इकट्ठे होकर अखण्ड शरीरवाले बन जाते हैं।

ओह ! कैसा भव ! कैसी वेदना ! हाय, जहाँ मौत भी मीठी लगती है ।

नरक जैसी ही भयानक दुर्गति है तिर्यंच की, बिल्ली के द्वारा फाडे गए चूहे और कबूतर ! अत्यन्त गुलामी की जिंदगी ! आज तो मेरे पास वेदना व्यक्त करने के लिए वाणी है, विरोधी को तमाचा मारने के लिए हाथ है, आपत्ति से भागने के लिए पाँव है, समस्या का निवारण करने के लिए मेरे पास बुद्धि है, हिम्मत है । और वहाँ.... ओह ! इसमें से कुछ भी नहीं । भूखा, प्यासा तडपकर मरने की दशा में होउं तो भी सगी माँ मुझे खाना नहीं देती ।

मेरी सारी शक्तियाँ पर, बुद्धि पर, पुण्य पर पूर्ण विराम अर्थात् तिर्यंचगति ।

मानव-जाति के हित (!) के लिए बनती दवाईयों का क्रूरता से प्रयोग होता है उन तिर्यंचो पर !

मांसाहारियों के लिए उन तिर्यंचो का जीतेजी काल किया जाता है । उनके पास काम करवाने के लिए भार उठवाना, मारपीट करना आदि तो सामान्य जीवन-घटना है । इस गति में जाने के बाद अनंते भव के बाद भी छुटकारा नहीं मिलता।

नरक से भी इस गति में दुख कम होंगे । परन्तु मानव-जीवन और मोक्षलक्षी धर्म की आराधना पुनः प्राप्त करने के लिए इस गति में समय का अंतर बहुत ज्यादा है । इसीलिए नरक से भी अधिक खराब इस गति को माना जाता है ।

और...... सद्‌गति कहलाती मानव और देव की गति ! यदि पुण्य का उदय हो तो बेशुमार पाप हो सकते हैं और पाप का उदय हो तो आर्त्तरौद्र ध्यान से निकाचित कर्मबंध भी हो सकते हैं । बादमें धर्मध्यानादि कुछ भी नहीं मिल सकता । एक अपेक्षा से दुर्गति से भी सद्‌गति ज्यादा भयानक बन सकती है ।

हाय ! किए हुए कुकर्मो के काले फल कैसे भोगेंगे ?

मुझे याद है लक्ष्मणा साध्वीजी, जिन्होंने छोटी सी भूल के कारण अस्सी चोवीसी तक भयंकर संसार में परिभ्रमण किया ।

मुझे याद है वे सामयिक मुनि, जिन्होंने साधु जीवन में भी पत्नी के प्रति मानसिक राग जीवंत रखा इसीलिए वे अनार्य देश में आर्द्रकुमार के रुप में उत्पन्न हुए ।

मुझे याद है रुक्मि०० साध्वी ! मात्र एकबार विकारी नजर से उनका अनंत संसार बढ गया ।

मुझे याद हैं मरिचिमुनि ! छोटे से उत्सूत्र भाषण के कारण दीर्घ संसार बढ गया ।

मुझे याद है मगधपति श्रेणिक ! हिंसा के पाप की प्रशंसा करके नरक की दुर्गति में बराबर फिट हो गए । ओह ! ऐसे दुःख सहन करने की मुझमें कोई ताकत नहीं है । मैं तो इन दुःखों की स्वप्न में भी कल्पना नहीं कर सकता । हाय ! फिर भी ऐसे दुःख देनेवाले पाप मैंने किए ।

अरे रे ! मुझे कोई रोकने नहीं आया, कोई मेरा हितैषी नहीं बना, किसीने मुझे सही सलाह भी नहीं दी, नहीं तो शायद में इस उन्मार्ग में नहीं जाता ।

लेकिन अब क्या करता ? जो होना था सो हो गया ।

हाँ.... अब बचने का एक ही रास्ता बचा है । अत्यन्त पश्चाताप पूर्वक सद्गुरु के पास सरलतापूर्ण हृदय से प्रायश्चित करना ।

वह दृढप्रहारी साधु ! काले पाप करके भी प्रायश्चित से शुद्ध बन गया ।

वह इलाचीकुमार ! पश्चाताप का महानल प्रज्वलित करके बांस पर ही केवलज्ञान प्राप्त कर लिया ।

चिलातीपुत्र ! परस्त्री के काले पाप को भी धोकर कैसा साफ कर दिया ।

चंदकौशिक सर्प ! शुद्धि करके कैसा आबाद बच गया ।

अरे ! अरे ! मैं काल का बदमाश, आनेवाले कल मैं भी भगवान नहीं बन सकता ?

प्रश्न है मात्र प्रायश्चित करने की हिम्मत का.....

नहीं......नहीं...... अब तो शरम छोडकर मैं हिम्मत से सुविशुद्ध प्रायश्चित करुंगा ।

अब तो जब मुझे स्पष्टता से दिख रहा है कि,

क्षण का सुख, मण का पाप और टन का दुःख !

तो मेरे लिए प्रायश्चित के सिवाय बचने का और कोई रास्ता ही नहीं है ।

यह बात तो निश्चित है कि मैं दुःख को सहन करने में कायर हूं । मेरी आत्मा दुःख की परछाई से भी घबराती है ।

अरे ! बुखार उतारने की कडवी दवाई भी मैं जल्दी से नहीं ले सकता ।

बस स्टेन्ड तक भी चलने से मेरे पाँव थक जाते हैं ।

कन्डकटर हाथ पकडकर बस से यदि उतारे तो आत्महत्या करके मर जाने का मन हो जाता है ।

घर का स्वजन यदि चाय बनाकर न दे अथवा थोडी सी भी देर करे तो तुरंत क्रोध आ जाता है ।

सहन नहीं कर सकता दांत का दर्द अथवा पेट की पीडा, भयंकर सरदर्द अथवा पाँव का दर्द ।

ऐसी दुःख की कायरतावाली मेरी आत्मा दुर्गति के दुःख के पर्वतों को कैसे सहन करेगी ? अरे ! मुझसे ये दुःख सहन नहीं होंगे।

इसीलिए अब तो प्रायश्चित करना बहुत जरुरी है ।

या तो शरम छोडकर संपूर्ण रुप से प्रायश्चित करुं, या दुःख के सागर में डूब जाउं ।

नहीं...... नहीं.. इस सागर में कैसे डूबा जाय ? अरे ! इसका विचार करते ही हृदय कंपित हो जाता है ।

तो बस... कल ही सद्गुरु के पास प्रायश्चित करुं और अपने उजडे हुए जीवन उजाले से भर दूं ।

फिर मेरी आत्मा मस्त गगन में उडान भरेगी ।

संग करेगी संतो का, भजन करेगी भगवंतो का, भोजन करेगी विरति का.....

वंदन.... वंदन.... ओ तारक तीर्थंकर देव ! ओ मेरी माँ ! आपको कोटि कोटि वंदन..... यदि आपने हमें यह प्रायश्चित विधि नहीं दी होती तो हम दुर्गति में अनंतकाल के लिए भटक जाते । हमारी कैसी भयानक हालत हो जाती !

वंदन... वंदन.... ओ सद्गुरुदेव !

यह प्रेरणा देकर आप हमारी भवोभव की माता बन गयी हो ! आज से आप ही मेरी माँ हो !

वंदन....वंदन... इस जिनशासन को ! जिसने ऐसे अनंतानंत तीर्थंकर देव और गुरुदेवों को जन्म दिया है। हमारी माताओं की भी ओ माँ ! ओ दादी माँ ! ओ जिनशासन ! आपके चरणों में कोटि कोटि वंदन ।

और...... भूतकाल में जिन पुण्यात्माओं ने सर्व पापों का प्रायश्चित किया है उन सभी को मेरे कोटि कोटि वंदन..... उन्होंने इस मार्ग को जीवित रखकर मार्ग भूले हुए हम जैसों को इस मार्ग पर प्रयाग करने की, इस मार्ग पर कदम रखने की प्रेरणा दी है।

* * *

४. पापशल्यों के उद्धार के विषय में मननीय प्रेरणा

गंतूणगुरुसगासे काउण य अंजलि विणयमूलं ।
सव्वेण अत्तसोही कायव्या एस उवएसो ॥

गुरु के पास जाकर, विनयपूर्वक हाथ जोडकर, सभी पापभीरु आत्माओं को संपूर्ण रुप से अपनी शुद्धि करनी चाहिए ऐसा तीर्थंकर देवों का उपदेश है ।

न हु सुज्झई ससल्लो जह भणियं सासणे धुवरयाण ।
उद्धरियसव्वसल्लो सुज्झई जीवो धुयकिलेसे ॥

कर्मरज से सर्वथा मुक्त बने उन तारकों के शासन में स्पष्ट बताया गया है कि पाप के शल्यवाली आत्मा कभी शुद्ध नहीं होती, जो सर्व शल्यों का उद्धार करती है वही आत्मा सर्व क्लेश से मुक्त बनकर शुद्ध बनती है ।

सहसा अण्णाणेण व भीण्ण पिल्लिकेण वा ।
वसेणायंकेण व, मूढेण व रागेदोसेहिं ।
जं किंचि कयमकज्जं व उज्जुयं भणइ ।
तं तह आलोएज्जा मायामयविप्पुमुक्को तु ।

अचानक अज्ञानता से, भय से, किसीके दबाव से, गलत आदत के कारण अथवा संकट में फंसकर राग-द्वेष से मूढ बनकर जो कुछ भी अकार्य हुआ हो उसे अत्यन्त सरलता से माया-मद से रहित बनकर गुरु के पास आलोचना करनी चाहिए ।

तस्स य पावच्छित्तं जं मग्गविउ गुरु उवइसंति ।
तं तह आयरियव्वं आणवज्जपसंगभीएण ।

उसका जो प्रायश्चित, मार्ग के जानकार सद्गुरु दे, उसे सावधानी पूर्वक वहन करना और पुनः पाप का प्रसंग न आए उसकी सावधानी रखना ।

न वि तं सत्वं व, विसं व, दुप्पउतो व कुणइ वेआलो ।
जतं व दुप्पउतं, सप्पो व पमाइणो कुद्धो ।

विश्व में ऐसा भयंकर संकट लाने की ताकत किसी शास्त्र में नहीं, किसी जहर में नहीं, किसी भूत-प्रेत में नहीं, किसी यंत्र में नहीं अथवा क्रोधान्ध बने सर्प में भी नहीं ।

जं कुणई भावसल्लं अणुद्धियं उत्तमट्ठकालंमि
दुल्लभबोहीयतं अणंतसंसारियत्तं च ॥

ओधनिर्युक्ति : श्लोक ७९७ से ८०४

जो ताकत, समाधि मरण के समय में भी आत्मा से दूर नहीं किए गए पाप के भाव शल्यों में हैं; ऐसे शल्य आत्मा को दुर्लभबोधि बनाते हैं, अनंतकाल तक संसार में परिभ्रमण करवाते हैं ।

* * *

५. शुद्धि कैसे करनी ?

१. सब कुछ विस्तार से लिखना ।

२. इस लेखन के लिए अपने पास चालीस पृष्ठ की नोट बुक अथवा डायरी साथ ही रखना । उस नोट के प्रत्येक पृष्ठ पर निम्नलिखित विषय लिखें :-

१. हिंसा २. झूठ ३. चोरी ४. अब्रह्मचर्य (हस्तमैथुन, परस्त्री, वेश्या, सजातीय संबंध आदि) ५. अन्याय के मार्ग पर व्यय किया गया धनादि का संग्रह ६. क्रोध ७. अभिमान ८. माया, प्रपंच, विश्वासघात ९. क्लेश कलह १०. चुगली, कलंक देना ११. कुदेव, कुगुरु, कुधर्म की मान्यता, पूजादि १२. ज्ञान और ज्ञानी की आशातना १३. प्रतिमाजी, जिनमंदिर अथवा तीर्थस्थलों की आशातना १४. चारित्र अथवा चारित्रधारी त्यागीयों की आशातना १५. तप का भंग अथवा तपस्वी की आशातना १६. सिनेमा, नाटक, तलाक, गर्भपात १७. शराब, अण्डे, मांस, जूए आदि के संबंध में १८. कंदमूल तथा रात्रिभोजन का उपयोग १९. द्विदल (कच्चा दूध अथवा कच्चे दही के साथ कठोल) का उपयोग २०. देवद्रव्य का भक्षण अथवा उपेक्षा २१. ज्ञानद्रव्य साधारण द्रव्य की उपेक्षा २२. साधर्मिक की उपेक्षा.

इन बाईस विषयों का विस्तार आगे दिया गया है । इन्हें सामने रखकर लिखने से लिखने में सरलता रहेगी ।

३. जिस समय पाप याद आए उसी समय वह पाप लिख देना चाहिए ।

४. इस तरह जितना हो सके उतना याद करके सब कुछ विस्तार से लिखना । कौन सा पाप ? कितनी बार ? कब ? किसके कहने पर ? आदि सभी बातें लिखना ।

५. इसके बाद भी यदि कोई बात याद न आए तो उसका भी प्रायश्चित दिया जाएगा ।

६. इस पुस्तिका के अंत में जो कार्ड है उसका जो भाग प्रायश्चित करनेवाले पुण्यशाली को भरना है वह भाग भरकर वह कार्ड वहाँ से फाडकर आपकी एक्सरसाईझ नोट के साथ गुरुदेव को देना ।

बाईस विषयों के प्रत्येक विषय पर विस्तार

१. हिंसा

१. सामायिकादि में त्रस (दो-तीन-चार- पांच इन्द्रियवाले) और स्थावर (पृथ्वी - अप - तेउ - वायु - वनस्पति) जीवों का स्पर्श हुआ हो, पीडा पहुंचायी हो, नाश किया हो ।

२. सामायिकादि में जोरदार बारीश की छांट लगी, भीग गए ।

३. बिन छाने पानी का उपयोग किया, गरम किया , व्यापारादि काम के लिए दीया ।

४. खारा-मीठा/ठंडा-गरम पानी एक दूसरे में मिलाया ।

५. पानी छानने के बाद जीवों को जहाँ तहाँ फेंका, सुखा दिया ।

६. छिद्रवाली जमीन पर/खाली कुएँ आदि में स्नान का पानी, गरम पानी बहाया ।

७. पूंजे बिना, प्रमार्जन किए बिना लकडियां आदि चूल्हे में डाली।

८. छाण बासी रखा, लींपण किया ।

९. त्रसादि जीवों सहित अनाज पीसाया, धूप में रखा ।

१०. मकोडे सहित पाटला, पलंगादि धूप में रखें ।

११. चिडियाँ, कबूतर आदि पक्षियों के घर तोडे ।

१२. कचरा / सूखी घास जलायी, खेत जोते, खेत में लोभ से गाय-बैलादि पशु बांधे, उन पर दमन किया ।

१३. घंटी, सांबेला, गैस, स्टव, चूल्हा आदि देखे बिना / पूंजे बिना जलाया ।

१४. पशु-पक्षी को पकडने के लिए जाल बिछाया, पशु आदि का वध किया, करवाया ।

१५. घास/निगोदादि पर बैठे, चले, स्पर्श हुआ ।

१६. रात्रि में / कारण बिना स्नान की, तालाब आदि में स्नान की / कपडे धोये ।

१७. बाल की जू, लीख आदि की विराधना की, नाश की ।

१८. कृमि-अलसीया का नाश किया - करवाया ।

१९. पशु/नौकर पर अतिभार का आरोपण किया, निर्दय प्रवृत्ति की ।

२०. राजादि का घात किया, गाँव जलाया ।

२१. वर्षा ऋतुमें ढंके बिना दिपक जलाया, बहुत लाईट की ।

२२. पाउडर-दवादि छंटवाकर मक्खी, मच्छर, मकोडा, चूहादि जीवों को मरवाया ।

२३. कारखाने, बनाये, बनवाए, उद्घाटन किया ।

२४. M.C. में के कपडे धोए बिना फेंक दिए ।

२५. M.C. दूर नहीं बेठे ।

२६. M.C. में २४ प्रहर के पहले स्नान किया ।

२७. भोजन-पानी जूठा रखा ।

२८. खेत में खेती की, करवायी ।

२९. जीववाले गादी, रजाई, खाट आदि धूप में रखे ।

३०. अपने बालक का पक्ष लेकर दूसरों के बालक को मारा, मरवाया ।

३१. बालकों को डराया, धमकाया ।

३२. हल, छुरी, कुहाली, घंटी आदि हिंसा के साधन इधर उधर रखे, दूसरों को दिए, दिलवाए ।

३३. घर के पास गड्डे खोदे, खुदवाए ।

३४. मकखी, मच्छरादि उडते हुए जीवों को हाथ से पकडकर मारा ।

३५. दूसरों के साथ बैठकर एक थाली में भोजन किया ।

३६. पटाखे फोडे ।

३७. कामवाली के भरोसे जूठे बर्तन ऐसे ही पडे रखे, ४८ मिनिट के अंदर - अंदर साफ नहीं किए ।

३८. चूहे पकडने के लिए पिंजरा रखा, उसमें चूहे की हिंसा हुई ।

३९. कुत्ते, बिल्ली, गाय, भैंस, घोडादि पशुओं को बांधकर रखा ।

४०. प्रसूति के बाद नाल का छेदन किया, प्रसूति करवायी ।

४१. एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक के जीवों पर प्रहार किया, अंगो का छेदन किया ।

४२. बासी भोजन किया, करवाया ।

४३. हल, यंत्र, चूल्हादि हिंसक वस्तुओं का व्यापार किया/तलवार, चाकु, कैंची आदि खो गए ।

४४. सरोवरादि का शोषण किया ।

४५. मकान/कारखानें बनवाए/ रंगादि किए, करवाए ।

४६. भयंकर आरंभ-समारंभ किए, ईंटादि पकायी ।

४७. बाजार की कोई भी वस्तु का इस्तेमाल किया ।

४८. प्राणीयों की डीझाइनवाले कपडे पहने अथवा बेड शीट इस्तेमाल की ।

२. झूठ

१. क्रोध, लोभ, भय, हास्य, राग, अज्ञान से झूठ बोला ।

२. जमीन, कन्या, गाय आदि पशु संबंधी झूठ बोला ।

३. अन्य की स्थापना पर कब्जा किया, झूठे दस्तावेज बनाये अथवा दस्तावेज पर कम-ज्यादा अक्षर लिखे ।

४. झूठी साक्षी दी, सलाह दी, झूठी फाईल बनायी ।

५. गुप्त बात का भेद दूसरों से कहा ।

६. कोर्ट तक कलंक पहुंचाया ।

७. अयोग्य रीति से किसी को सजा दिलवाना, मरवाना, छल-कपट करना ।

८. धर्म का लोप हो वैसे उत्सूत्र वचन बोलना ।

९. सौगंद खाना, गाली देना, मर्म वचन बोलना ।

१०. छोटी-छोटी बातों में निष्ठुरता से झूठ बोलना ।

११. झूठा तोल-माप करना ।

१२. झूठा आरोप लगाना ।

३. चोरी

१. स्वयं के / अन्य के घर में छोटी -बडी चोरी की ।

२. Tax (कर), octroi (जकात) की चोरी की ।

३. वस्तु में मिलावट की, माया -कपट किया ।

४. बिना टिकिट ट्रेन/बस में मुसाफरी की ।

५. सब्जी लेने गए तब २-४ नंग चोरी की ।

६. चोर को प्रोत्साहन दिया/आश्रय दिया ।

७. वकील के व्यवसाय में दोषी को निर्दोष और निर्दोष को दोषित साबित करके जैल में /लोकप में डलवाया, मरवाया ।

८. वृक्ष पर से फलादि की चोरी की ।

९. परीक्षा में नकल की ।

१०. मंदिर की पेटी में से पैसे की चोरी की, मंदिर में पडी हुई वस्तु खायी ।

११. रास्ते में पडे पैसे आदि लिए ।

४. अब्रह्मचर्य (विजातीय, सजातीय, स्वजातीय.....)

१. अचानक/प्रमाद से / इच्छा से स्वस्त्री-परस्त्री-परपुरुष के साथ अब्रह्म का सेवन किया ।

२. मैथुन संबंधी विचार किए, अब्रह्म की बात की, करवाई ।

३. वेश्यागमन किया, रखैल रखी ।

४. अभिमान से स्वस्त्री-वेश्यादि के विषय में व्रतभंग किया ।

५. हास्य/स्वप्न में शीलभंग किया करवाया ।

६. तिर्यंच के साथ अब्रह्म संबंधी व्रत भंग किया ।

७. हस्तमैथुन किया / सजातीय संबंध किया ।

८. स्त्री/पुरुष पर बलात्कार किया ।

९. परस्त्री के अंगोपांग देखे, स्पर्श किया ।

१०. पुतले-पुतली का विवाह करवाया ।

११. तीव्र राग दृष्टि से परस्त्री को चुंबन, आलिंगन आदि कुचेष्टा की, गुप्त अंगो का स्पर्श किया, अनंगक्रीडा की।

१२. अन्य के विवाह करवाए / वर-वधू की प्रशंसा की ।

१३. शील पालन में विघ्न डाले, भंग करने में निमित्त बने ।

१४. कुमारी/कुमार अवस्था में, स्वप्न में शील का भंग किया/हुआ ।

१५. होटल में परस्त्रीयों को बुलाकर कुचेष्टायें की ।

१६. स्त्री-सेक्रेटरी - स्टेनो के साथ अनुचित वर्तन किया ।

१७. निराधार- आश्रित स्त्रियों को गलत रीति से फसाया ।

१८. स्कूल-कोलेज में लडके/लडकियों के साथ गेरव्यवहार किया, प्रेमप्रकरण चलाया ।

१९. स्त्री-पुरुष के चित्र राग से देखे / अशुभ विचार किए ।

२०. M.C. में संभोग किया ।

२१. विजातीय के अंग, उपांग, लिंगादि देखे, गुप्त अंगो का स्पर्श किया । कामक्रीडा करते देखा, सराग दृष्टि की ।

२२. नवरात्री में / विवाह में अन्य स्त्री-पुरुष के साथ नृत्य किया / दांडिया रास खेला ।

२३. ब्ल्यु बुक्स, नोवेल, बिभत्स पुस्तको का वांचन किया ।

२४. एडल्ट सिनेमा देखकर कामवासना उत्तेजित की ।

२५. हाथ-पांवादि बारबार धोकर सेंट, परफ्युम लगाकर, पाउडर लगाकर, शोभा/विभूषा की ।

२६. मंदिर/उपाश्रय/भीडवाले स्थानों में विजातीय के साथ स्पर्श की इच्छा की, रागदृष्टि से देखा ।

२७. तिथि के दिन अथवा तीर्थ स्थानोंमें अब्रह्म का सेवन किया ।

२८. स्त्री को पुरुष का अथवा पुरुष को स्त्री का परस्पर स्पर्श किया / हुआ ।

२९. फेशबुक पर विजातीय के साथ चेटींग कीया, बिभत्स बातें की।

३०. इन्टरनेट पर बिभत्स फिल्म देखी ब्ल्यु फिल्म देखी ।

३१. किसीको राग पैदा होवे वैसी चेष्टा / कर्म किया अंगोपांग प्रदर्शन किया ।

३२. संस्कृति की विरुद्ध के अंगोपांग का प्रदर्शन कराते हुए वस्त्रपरिधान किये (जीन्स, टीशर्ट, बरमूडा, देह के साथ चुस्त, स्लीवलेस, बेकलेस, स्कर्ट, शोर्टस्, लगभग पारदर्शक वस्त्र आदि)

५. परिग्रह / अन्यायी मार्ग में धनसंग्रह

१. जाने / अनजाने /अचानक परिग्रह के नियमों का भंग किया ।

२. हथियार / साबुन / भांग /नशीली दवाइयां / महाविगई आदि चीजों का व्यापार किया ।

३. धन-धान्य-क्षेत्र-सोना-चांदी-पशु आदि ९ चीजों का परिग्रह प्रमाण से अधिक किया/ प्रमाण नहीं किया / प्रमाण लेकर तोडा ।

४. धन संग्रह में मूर्च्छा की, उसके संयोग में सुख एवं वियोग में दुःख माना ।

५. धन संग्रह / व्यापार में अनीति की, विश्वासघात करके दूसरों का धन पचाया ।

६. क्रोध

१. भयंकर आवेश किया / बहुत समय तक क्रोध रखा ।

२. क्रोध में वडिलों, माता-पिता, छोटो के सामने अनियंत्रित रुप से जवाब दिया ।

३. क्रोध में किसीको श्राप दिया / अशुभ नियाणा किया ।

४. सुख-दुःख में अथवा धर्म के नाम पर तीव्र क्रोध किया ।

७. अभिमान

१. सत्ता / संपत्ति / समृद्धि / विद्वत्ता का अहंकार किया और उसके मद में गलत / अनुचित वर्तन किया ।

२. अभिमान से दूसरों का अपमान किया ।

३. अभिमान से दूसरों को तुच्छ मानकर आप बडाई की एवं दूसरों की निंदा की, इर्ष्या की ।

८. माया, प्रपंच, विश्वासघात

१. माया, प्रपंच, विश्वासघात किया ।

२. आत्महत्या के विचार किए एवं अन्य के ऐसे विचारों में निमित्त बने ।

३. उपकारी के प्रति कृतघ्नी बने ।

४. मैली विद्या, जंतर-मंतर, वशीकरणादि किए/करवाए ।

९. क्लेश - कलह

१. क्लेश-कलह करके परिवार और समाज में अशांति फैलायी ।

२. संघ के सदस्यों के साथ, मिटिंग में झगडा किया ।

३. माता-पिता के साथ झगडा करके अलग दुकान / घर रखा ।

४. पति/पत्नी के साथ कलह किया ।

५. देराणी / जेठाणी / भाई / बहन के साथ कलह किया ।

१०. चुगली - कलंक देना

१. एक की चुगली दूसरे के पास खायी ।

२. दूसरों पर झूठा आरोप दिया, शाकिनी (डाकण) आदि कहा ।

३. धन प्राप्ति के लिए निर्दोष को दोषित साबित किया ।

४. दान देनेवाले की निंदा की ।

५. साधु-साध्वी - देव-गुरु-धर्म वडिलों की निंदा की ।

६. निवृत्ति के समय में निरर्थक चुगली की ।

११. सम्यग्दर्शन के अतिचार कुदेव-कुगुरु-कुधर्मकी पूजा मान्यता

१. अन्य दर्शन की प्रभावना देखकर उसे अच्छा माना / उसकी पूजा की ।

२. मिथ्यात्वी / कुतीर्थी / अन्यलिंगी का परिचय किया / परिपालन किया, उनकी झूठी प्रशंसा की, ममत्व रखा, उन्हें सूत्रार्थ दिए, परिचय बढाया ।

३. पार्श्वस्थादि को गुरु माना, उन्हें आहारादि दिए ।

४. जिनेश्वर भगवान के वचन में अश्रद्धा की, उनके दर्शन-पूजन नहीं किए और अन्य को भी ऐसी शिक्षा दी।

५. मिथ्यात्वी क्रिया रुप होम-हवन आदि करवाए ।

६. शीतला माता / नाग देवता / संतोषी मा आदि की मान्यता रखी

और अन्य को भी ऐसा करने की प्रेरणा दी / होली / रक्षा बंधन / नाग पंचमी आदि पर्व माने ।

७. नदी, कुंडादि में पिता आदि को श्रद्धांजली दी / श्राद्ध कार्य किए।

८. सोमवार-गुरुवार-शुक्रवार अथवा बारस-अमावस आदि मिथ्या तिथियों की आराधना की, मिथ्या तीर्थों पर स्नान उत्सवादि करवाए ।

९. तुलसी-गाय आदि को भगवान मानकर उनकी पूजा की ।

१०. मिथ्यात्वी के तीर्थों पर गए, जीर्णोद्धार किया, नए मंदिर बनवाए।

११. धर्म के प्रभाव से इन्द्रलोक, परलोक में भौतिक सुख-समृद्धि की प्राप्ति के लिए नियाणा किया, संकल्प किए ।

१२. सुख में जीवन, दुःख में मरण और कामभोग की इच्छा की ।

१३. दूसरों की निंदा की, निंदा सुनने में रस लिया ।

१४. गोत्रीज/निवेधादि किए, माताजी/कुलदेवता के पूजा -पाठ करवाए, सत्य नारायण / घंटाकर्ण आदि की पूजायें करवायी ।

१२. कु-ज्ञान और ज्ञानी की आशातना

१. अकाल में पढाई की । (अकाल अर्थात् सूर्योदय के पहले और सूर्यास्त के बाद ४८ मिनिट - मध्याह्न और मध्यरात्रि के पहले और पश्चात २४-२४ मिनिट का समय)

२. पढाई करते समय ज्ञान-गुरु का विनय-बहुमान नहीं किया ।

३. उपधान किए बिना / जोग किए बिना आगमों का सूत्रों का अध्ययन किया ।

४. सूत्र का अर्थ गलत किया । सही अर्थ छुपाया ।

५. कागजादि ज्ञान के उपकरण जलाये / उनमें आहार-निहार किया। उन पर बैठे ।

६. प्रमाद के कारण ज्ञानाभ्यास नहीं किया ।

७. पुस्तक, नवकारवाली आदि फेंके / पाँव लगा/लगाया, तूट गए।

८. ज्ञान-ज्ञान के साधनों को थूंक-पसीना लगाया ।

९. ज्ञान की निंदा की । ज्ञानदाता का नाम छुपाया । ज्ञानी पर द्वेष किया ।

१०. किसीको पढाई में अंतराय किया ।

११. ज्ञान का अग्नि-पानी आदि से नाश किया, रद्दी में दिए, फेरीवालों को ज्ञान के पुस्तक देने के द्वारा ज्ञान की घोर आशातना की ।

१२. ऋतुकाल में (M.C. में) ज्ञान के साधनों को स्पर्श किया, उपयोग किया, ज्ञान को पढाया, लिखा, स्कूल, कोलेज गए, घूमने गए, ट्रेन, हवाई जहाज, बस, गाडी में सफर किया ।

१३. अध्ययन करवानेवाले जैन-जैनेतर गुरु का बहुमान-विनय नहीं किया ।

१४. ज्ञानद्रव्य का दुरुपयोग किया, वृद्धि की उपेक्षा की ।

१५. तोतडा, गुंगा, अनपढ की हंसी-मजाक की ।

१६. ज्ञान का अभिमान किया ।

१७. घडी-पैसे आदि अक्षरवाली वस्तु के साथ पेशाब, संडास आदि किए / अशुद्ध हाथ लगाए ।

१८. भोजन करते-करते/खाते-खाते जूठे मुंह बोले ।

१९. पांच प्रकार के सम्यग्ज्ञान के प्रति अश्रद्धा और मिथ्याज्ञान में श्रद्धा की ।

२०. ज्ञानी महात्माओं की निंदा-ईर्ष्या की ।

२१. स्कूल में शिक्षक आदि की छेड-छाड की ।

२२. ज्ञानादि द्रव्य के पुस्तकों का निशुल्क उपयोग किया ।

२३. विद्यागुरु की आशातना, अनादर किया ।

२४. कागज पर मस्तक रखा, विष्ठा साफ की ।

२५. कागज की प्लेट में भोजन किया ।

२६. अक्षरवाले कपडे पहने, पहनाये / बेड शीट इस्तेमाल की ।

२७. पुस्तक जमीन पर रखकर पढाई की/ बीच में पडी हुई पुस्तक स्थान पर नहीं रखी ।

२८. ज्ञान को स्पर्श करते हुए आहार-निहार (संडास) किया ।

२९. सूत्र में हीन अधिक अक्षर का उच्चारण किया ।

३०. थूंक से अक्षर मिटाए । थूंक से पुस्तक के पेपर और नोट को खोला ।

१३. जिनप्रतिमा - जिनमंदिर तीर्थों की आशातना

१. भगवान के वचन में शंका की । धर्म के फल में संशय किया ।

२. अन्य को समकित से चलायमान किया, धर्म को निरर्थक माना।

३. शक्ति होते हुए भी धर्म/शासन की प्रभावना नहीं की ।

४. प्रमादवश प्रतिमाजी हाथ से गिरे / प्रतिमाजी को बालाकुंची, कलश आदि टकराए ।

५. अशुद्ध वस्त्रों से / अविधि से पूजा की ।

६. प्रतिमाजी को थूंक/पाँव लगा, प्रतिमाजी का नाश किया, अंग तूटे।

७. जिनालय की वस्तु गुम हो गयी, तूट गयी, भूल से सांसारिक काम में उपयोग किया ।

८. शक्ति होते हुए भी तुच्छ द्रव्यों से परमात्मा की पूजा की ।

९. जमीन पर या प्रतिमाजी से नीचे गिरा हुआ पुष्प पुनः भगवान पर चढाया ।

१०. जिनालय में मुखवास, पान, चाय आदि वापरे ।

११. जिनालय में हास्य, निंदा, मजाक की / नाक-कान का मैल डाला, थूंक गिरा, अपानवायु निकाला ।

१२. मंदिर में / तीर्थ स्थानों में ऋतुकाल में (M.C.) हुए / आहार-निहार किया ।

१३. पूजादि न करने का नियम लीया / दूसरों को दिया / अन्य को पूजा में विक्षेप किया ।

१४. दिगंबरादि अन्य मत के प्रभाव में आकर प्रतिमाजी के चक्षु/तिलक आदि निकालने का प्रयत्न किया ।

१५. मंदिरजी/तीर्थस्थानोंमें घूमने के हेतु से गए, मात्र देखने के इरादे से गए, परमात्मा को हाथ नहीं जोडे, विनय नहीं किया ।

१६. शत्रुंजय/ गिरनार आदि तीर्थ स्थानों में तीर्थों की विविध प्रकार से आशातना की ।

१७. देवदर्शन/पूजादि का नियम लेकर तोडा / M.C. में पूजा की । पूजा करते हुए M.C. में आए ।

१८. द्रव्य पूजा करने के बाद चैत्यवंदनादि अग्र पूजा//भावपूजा नहीं की ।

१९. पर्व तिथियों में चैत्यपरिपाटी नहीं की अथवा चैत्यपरिपाटी आदि प्रसंगो में जुडकर जिनदर्शनादि की उपेक्षा की ।

२०. परमात्मा से सांसारिक सुखों की मांग की ।

२१. परमात्मा की सौगंद खायी, दर्शन-पूजा किए बिना खाया ।

२२. परमात्मा के फोटो फाडे या फेंके ।

२३. पूजा के कपडों के बिना प्रभु को स्पर्श किया ।

१४. देश- सर्वविरतिचारित्रवानो की आशातना

१. गुणवानों की निंदा की ।

२. देव-गुरु-धर्म की निंदा की / निंदा सुनने में रस लिया ।

३. अन्य की धार्मिक आराधना की प्रशंसा नहीं की ।

४. बाल-वृद्ध-ग्लान-तपस्वी-नवदीक्षित, गुरु आदि की उचित सेवा भक्ति नहीं की ।

५. साधु-साध्वी भगवंत को रास्ते में देखने पर वंदनादि विनय नहीं किया । उनके फोटो फाडे या फेंके।

६. प्रमादवश देव-गुरु को वंदन नहीं किया । नियम लेकर तोडा ।

७. मुनि से पुत्रादि को व्यावहारिक अभ्यास करवाया, रोग का निदान करवाया, पुत्रादि को खिलाया, डराया, शांत करवाया तथा घर के अन्य कार्य करवाए ।

८. मुनि से सांसारिक कारण से रक्षा पोटली, मंत्र-तंत्रादि करवाए ।

९. मुनि से वस्तु लेकर अकारण उपयोग किया या बेच दी ।

१०. साध्वीजी के पास पढाई की, पच्चक्खाण किए (श्रावकों के लिए)

११. साधु से अपना शरीर दबवाया, पाँव धुलवाए ।

१२. देव-गुरु आदि को पाँव-थूंक-श्वासोश्वास लगा ।

१३. गुरु की आज्ञा के विरुद्ध वर्तन किया, गुरु पर रोष किया, कडवे शब्द बोले, गुरु के आसन को पाँव लगाया।

१४. वडिल, साधु, आचार्य, उपाध्यायादि पर द्वेष किया, निंदा की ।

१५. स्थापनाचार्य स्थापित किए बिना क्रिया की, पाँव लगाया, आशातना की, पडिलेहण नहीं किया, अविधि से स्थापना की ।

१६. जानते हुए भी साधु-साध्वी को निष्कारण आधाकर्मी आहार वहोराया /अकल्प्य आहार को कल्प्य बनाकर, कल्प्य आहार को अकल्प्य बनाकर वहोराया ।

१७. देशावगासिक/अतिथिसंविभाग व्रत का भंग किया/ अतिचार लगाए ।

१८. पौषध नहीं किया/ पौषध समय से पहले पारा ।

१९. सामायिक में सावद्य वचन बोले, आर्त्तध्यान-रौद्रध्यान किया ।

२०. मुनि से वस्तु का क्रय-विक्रय करवाया ।

२१. M.C. में गुरु महाराज को गोचरी वहोरायी ।

२२. गुरुजी से पहले (गुरु महाराज) कायोत्सर्ग पारा ।

२३. पौषध में सचित्त का स्पर्श हुआ, स्थंडिल गए, स्वाध्याय नहीं किया, वमन हुआ ।

२४. पौषध में वंदन करके पच्चक्खाण नहीं लिया/पच्चक्खाण नहीं पारा ।

२५. पौषध में प्रतिक्रमण नहीं किया, वस्त्रों का प्रतिलेखन विधिपूर्वक नहीं किया ।

२६. पौषध में गृह व्यापार संबंधी बातें की, दोपहर में नींद ली ।

२७. सामायिक समय से पहले पारी ।

२८. सामायिक में स्थंडिल मात्रा करने गए, नींद ली, वर्षा के छांटे लगे, वर्षा होने पर भी बाहर गए ।

२९. सामायिक में स्वाध्याय नहीं किया, व्याख्यान नहीं सुना ।

३०. सामायिक/पौषध जैसी आवश्यक क्रियाये नहीं की, प्रमाद किया, चरवला/मुहपति खोए / तूट गए ।

३१. पर्व तिथि के दिन पौषध नहीं किया ।

३२. पौषध में बाहर जाते समय निसीहि आवस्सहि नहीं बोला, पेशाब, संडास परठते समय "अणुजागह जस्सुग्गहो" एवं परठने के बाद "वोसिरे-वोसिरे" नहीं बोला ।

३३. पौषध में १०० कदम से दूर जाकर आने के बाद इरियावहीव गमणागमणे न कहा ।

३४. पौषध में शाम को पेशाब परठने की भूमि (वसति) न देखी ।

३५. पौषध/सामायिक में बोलते समय मुहपत्ति का उपयोग नहीं रखा।

३६. पौषध में पोरिसी नहीं पढाई या भूल गए ।

३७. साधु-साध्वी के मैले कपडे देखकर दुर्गंछा की ।

१५. तपोभंग-तपस्वी की आशातना

१. तप का नियाणा किया/कषाय किया ।

२. पाक्षिक, चातुर्मासिक, सांवत्सरिक तप नहीं किया ।

३. पच्चक्खाण का भंग किया/ पारना भूल गए ।

४. शक्ति होते हुए भी १२ प्रकार का तप नहीं किया ।

५. नवकारशी आदि सरल पच्चक्खाण भी नहीं किए ।

६. तपश्चर्या में भूल से कच्चा पानी पीया ।

७. प्रमाद से, अभिमान से, जानते हुए भी तप-व्रत का भंग किया।

८. तप संबंधी अभिग्रह लेकर तोडे ।

९. तप/तपस्वी की निंदा की / बहुमान नहीं किया ।

१०. ४ महाविगई का संपूर्ण तथा ६ विगई का देश से त्याग नहीं किया।

११. द्रव्य का संक्षेप नहीं किया ।

१२. लोचादि कष्ट सहन नहीं किया ।

१३. काउस्सग्ग, ध्यानादि नहीं किए ।

१४. तप में विविध अतिचार लगाए ।

१५. चउविहार, तिविहार आदि पच्चक्खाण के बाद वमन हुआ । बादमें तुरंत मुँह में पानी डाला और साफ किया।

१६. इन्टरनेट, चेनल, सिनेमा, विडियो, नाटक, तलाक, गर्भपात

१. सरकस, नाटक, टेपरेकोर्ड, रेडियो, टी.वी., सिनेमा आदि देखे, सुने, अनुमोदना की ।

२. तलाक, गर्भपात आदि किया, करवाया, अनुमोदना की ।

१७. शराब, अण्डे, मांस, जुआ सेवन

१. जाने, अनजाने, कुसंग से अथवा फेशन से शराब, मांस आदि का सेवन किया ।

२. ब्राउनसुगर, हुका सिगरेट, बीडी, तंबाकु आदि कैफी द्रव्यो का व्यसन किया।

३. शक्ति के नाम पर अण्डे खाए, खिलाये, भ्रामक प्रचार किया ।

४. जूए का सेवन किया ।

१८. कंदमूल-रात्रिभोजन-अभक्ष्य

१. कंदमूल मिश्रित बाजार की वस्तुएँ खायी ।

२. लगभग वेला के समय (सूर्यास्त के समय) भोजन किया ।

३. निष्कारण अथवा सामान्य कारण से प्रमाद से रात्रिभोजन किया।

४. शास्त्रीय विधि से नहीं बनाया हुआ आचार खाया, तुच्छ फल, बहुबीज खाया ।

५. फाल्गुन चौमासे के बाद भाजी खायी । (हरे पत्ते)

६. बासी रोटी, थेपले, इटली, ढोसा आदि का घोल रखा, वापरा, खाया, खिलाया ।

७. शहद, मक्खन, बर्फ, आईस्क्रीम (घर के अथवा बाहर के) आदि अभक्ष्य पदार्थ खाए, खिलाए, बेचे ।

८. चउविहार, तिविहार आदि पच्चक्खाण लेने के बाद उल्टी हुई, मुँह में से दाने निकले ।

९. वर्ण-रसादि बदले हुए चलितरस का भोजन किया ।

१०. घर में अथवा बाहर के प्रसंग पर / प्रसंग के बिना, जाने अनजाने २२ अभक्ष्य और ३२ प्रकार के अनंतकाय का सेवन किया । ब्रेड पांउ आदि ।

११. रोटी-खिचडी आदि बासी रखकर दूसरे दिन खाए-खिलाए ।

१२. प्रत्येक वनस्पति पकाई-खायी-खिलायी ।

१३. विवाह में पान, सुपारी, कोल्ड्रिंक्स आदि अभक्ष्य पदार्थ खाए।

१४. बाजार में / लोरी के इटली, ढोसा, वडा, खमण, कचोरी, पानीपुरी, पाउंभाजी आदि खाए ।

१५. अचित्त जल के नियम का प्रमाद से/ जानकर भंग किया ।

१६. रात्रिभोजन / अभक्ष्य भोजन / आचार ये नरक के द्वार है । ऐसा जानते हुए भी निष्ठुर हृदय से खाए, खिलाए।

१९. द्विदल (कच्चे दूध, दही के साथ कठोल का उपयोग)

१. कच्चा (गरम किए बिना, अंगुली डालते ही जले नहीं वैसा गरम)

दूध, दही, छास, श्रीखंड के साथ कठोल (दाल, पापड आदि) मिलाकर खाया ।

नोट : दूध, दहीं अथवा छास भी गरम करना जरुरी है मात्र कठोलादि गरम हो तो नहीं चलता है ।

२. घर में अथवा बाहर श्रीखंडादि के साथ कठोल-चने की वस्तुएँ (फरसाण) खाए । दाल-चावल-पापड के साथ छास के घूंट लिए ।

२०. देवद्रव्य - गुरुद्रव्य भक्षण/उपेक्षा

१. प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रुप से देवद्रव्य/गुरुद्रव्य का उपयोग किया ।

२. देवद्रव्य/गुरुद्रव्य का नाश किया, नाश होते देखकर भी उपेक्षा की, परोक्ष रुप से उसमें निमित्त बने ।

३. देवद्रव्य-गुरुद्रव्य जिस बेंक में जमा किया था उसी बैंक में उन पैसों का लाभ लेकर अपने सांसारिक कार्यके लिए लोन आदि की सुविधा करवायी ।

४. देवद्रव्य-गुरुद्रव्य के चढावे के पैसे नहीं भरे / देर से भरे / भूल गए /एक खाते का कमिशन-ब्याज दूसरे खाते में दिया ।

५. देवद्रव्य के वेतनवाले पूजारी से अन्य सांसारिक कार्य करवाए।

६. देवद्रव्य- गुरुद्रव्य का अन्य खाते में उपयोग किया ।

७. शक्ति होते हुए भी देवद्रव्य-गुरुद्रव्य की वृद्धि नहीं की ।

८. चढावे चलते वक्त बाते करके चढावे में अंतराय किया ।

२१. ज्ञानद्रव्य-साधारण द्रव्य-भक्षण /उपेक्षा

१. उपरोक्त रीति से हि ज्ञानद्रव्य और साधारण द्रव्य के भक्षण में / अवृद्धि में प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रीति से निमित्त बने। उस तरफ उपेक्षा की ।

२२. सार्धमिक - सातक्षेत्र की उपेक्षा

१. सार्धमिक के साथ अप्रीति/अभक्ति/अबहुमान/अपमान युक्त व्यवहार किया ।

२. शक्ति होते हुए भी सात क्षेत्र / सार्धमिक के उद्धार की उपेक्षा की ।

२३. वीर्याचार के अतिचार

१. नींद के कारण प्रतिक्रमण, कायोत्सर्ग आदि विधिमें प्रमाद का सेवन किया ।

२. वांदणा देते समय गुरु का विनय नहीं किया, अक्षर हिनाधिक/आगे-पीछे बोला ।

३. प्रतिक्रमण नहीं किया / बैठे-बैठे / जल्दी-जल्दी किया ।

४. अविधि से आवश्यक क्रिया की / नहीं की ।

५. दानादि धर्म में शक्ति को छुपाया ।

६. सामर्थ्यानुसार पूजादि अनुष्ठान नहीं किए ।

७. सम्यग् दर्शन/ज्ञान/चारित्र प्राप्त करने में प्रमाद किया ।

८. देशविरति /सर्वविरति चारित्र लेकर प्रमाद का सेवन किया ।

९. विनय-वैयावच्चादि नहीं किए ।

१०. माता-पितादि वडिलों की योग्य सेवा नहीं की ।

२४. व्रत-पच्चक्खाण का भंग

१. जल/आकाश/स्थल के मार्ग में नियम से अधिक गमनागमन किया ।

२. दिशा परिमाण व्रत का भंग किया, एक दिशा को घटाकर दूसरी दिशा को बढाया ।

३. चौदह नियम का भंग किया / योग्य संक्षेप नहीं किया ।

४. भोगोपभोग परिमाण का अतिक्रमण किया ।

५. अनर्थदंड का सेवन किया/परिमाण व्रत लेकर तोडा ।

६. विकथा की ।

७. विडीयोगेम, साइबरकाफे, शतरंज, केरम, क्रिकेट, चेस, पत्ते आदि खेल खेले, देखे ।

८. अतिथि संविभाग व्रत में अतिचार लगाए ।

९. पर्वतिथि के दिन शक्ति होते हुए भी व्रत पच्चक्खाण नहीं किया।

१०. भोजन के सिवाय निवृत्ति के समय में विरति में नहीं रहे ।

२५. जनरल अतिचार

१. माता के गर्भ में ९ महिने रहकर, गर्भ में से निकलते समय माता को अतिशय पीडा दी ।

२. माता-पितादि वडिलों को कटुवचन कहे, अपमान किया ।

३. पाठशाला-स्कूल में शिक्षको की मजाक की, उन्हें मारा ।

४. विद्यागुरु के सामने जवाब दिया ।

५. नौकरादि को पीडा पहुंचाई ।

६. जीव-अजीव वस्तु पर राग-द्वेष-ममत्व किया ।

७. नाशवंत वस्तु के लिए झगडा किया ।

८. किसीके घर तोडे/जलाए ।

९. स्वजनों की मृत्यु होने से आर्त्तध्यान किया ।

* * *

६. दिए गए प्रायश्चित के विषय में सूचना

१. यदि उपवास अथवा आयंबिल का तप न हो सके तो उसके बदले निम्नलिखित आराधना तप कर सकते है।

१ उपवास	=	२ आयंबिल अथवा ४ एकासण
१ आयंबिल	=	२ एकासण अथवा ४ बियासण
१ एकासण	=	२ बियासण
१ उपवास	=	५ नयी गाथा याद करना
१ उपवास	=	५ सामायिक करनी
१ उपवास	=	४ घंटे का स्वाध्याय करना ।

२. जो स्वाध्याय अथवा माला दी गयी हो वह सामायिक में बैठकर ही करना अथवा इरियावही करके ही करना।

३. दी गयी समयर्यादा में (जितनी जल्दी हो सके उतनी जल्दी) प्रायश्चित पूरा करने का प्रयत्न करना। क्योंकि आयुष्य का भरोसा नही।

४. प्रति वर्ष एक बार नयी भूलों का प्रायश्चित हो सके तो उन्हीं प्रायश्चितदाता गुरु के पास कर लेना चाहिए ।

* * *

७. आलोचना और प्रायश्चित विधि के अंत में

हे पुण्यवान् आत्मा ! अपने सभी पापों का प्रायश्चित करके आपने अपने मानव जीवन को सफल बनाया है । परमतारक तीर्थंकर देवो की आज्ञा का पालन करके आपने कमाल किया है । पाप निवेदन की प्रत्येक पल में आपने अपनी आत्मा से अनंत कर्मराशि का नाश किया है । अब आपको दिए गए प्रायश्चित को उसकी समयमर्यादा में पूर्ण करने का उल्लसित भाव से पुरुपार्थ करना । पुनः कोई भूल न हो इसके लिए सावधान रहना । वैसे निमित्तों के नजदिक भी मत जाना। ऐसा करने से पाप करना मुश्किल हो जाएगा। आपने जो शुद्धि की उसीसे ही एक ऐसी प्रचंड शक्ति का निर्माण होगा जो नए पाप करने के लिए आपको कायर बना देंगे ।

प्रायश्चित करने के द्वारा आपने प्रचंड शुद्धि प्राप्त की है, प्रचंड पुण्य प्राप्त किया है । धर्ममय जीवन जीने के प्रवेश द्वार पर आप आकर खडे हो ।

मेरे आपको लाख-लाख आशिष है कि आप अपने भावि जीवन

को धर्ममय बनाना, सर्वविरति के श्रेष्ठ मार्ग पर पदार्पण करके शीघ्रातिशीघ्र मुक्ति के द्वार पर दस्तक देना ।

आभार मानना, उस जिनशासनका....जिसने आपको बचाया ।

सदा स्मरण करना उन तरणतारणहार तीर्थंकर देवों का..... जिन्होंने आपका उद्धार किया है ।

परन्तु सावधान ! आप पापमुक्त तो बने परन्तु उसके साथ साथ पंचपरमेष्ठि भगवंतों के ऋण के भार से दब गए हो । पापमुक्ति तो हुई अब ऋणमुक्ति कैसे करनी ? इसका विचार करना और जो भी उचित लेगे उसे अमल में लाना।

आपका कल्याण हो.... कल्याण हो... कल्याण हो.........

* * *

परिशिष्ट

१. मानवता का धर्म अर्थात् मार्गानुसारी सद्गृहस्थ के पैंतीस गुण

१. द्रव्योपार्जन न्याय से करें ।

२. शिष्ट - अच्छे आचारों की अनुमोदना करें ।

३. समान गोत्र और भिन्न कुलाचारों में पुत्र-पुत्री के विवाह न करें। समान कुल शील धर्म और भिन्न गोत्रियों में योग्यता देखकर विवाह करें ।

४. पाप का डर रखें ।

५. योग्य प्रसिद्ध देशाचार का उल्लंघन न करें ।

६. राजादि किसीके भी अवर्णवाद न करें ।

७. खराब पडोशी अथवा भययुक्त मकान में न रहें ।

८. सदाचारीयों का संग करे ।

९. माता-पिता की सेवा करे ।

१०. उपद्रववाले स्थान का त्याग करें ।

११. निंदनीय प्रवृत्ति न करें ।

१२. आवक का उचित व्यय करें ।

१३. स्थिति के अनुसार वेशभूषा करें ।

१४. शुश्रुषादि बुद्धि के आठ गुण शुश्रुषा, श्रवण ग्रहण, धारणा, सामान्य तर्क, संदेह रहित विज्ञान, निश्चयपूर्वकका तत्त्वज्ञान ये आठ गुण धारण करें ।

१५. निरंतर धर्म श्रवण करें ।

१६. एक भोजन का पाचन हुए बिना दूसरा भोजन न करे ।

१७. संतोष से, शांति से बैठकर स्वास्थ्य के अनुकूल भूख के अनुसार स्वस्थता से भोजन करें । (खडे-खडे अथवा घूमते-फिरते तामसी अथवा अभक्ष्य पदार्थ न खाए ।

१८. धर्म-अर्थ-काम का परस्पर बाधा रहित सेवन करे । (धर्म को बाधा पहुँचाकर अर्थ-काम का सेवन न करें।

१९. साधु, संत, महेमान, अभ्यागत, दीन, अनाथ, अतिथिजनों का भोजनादि से यथायोग्य सेवा-सत्कार करें ।

२०. अभिनिवेश-मताग्रह से दूर रहे । "सच्चा वह मेरा" ऐसा माने लेकिन "मेरा वही सच्चा" ऐसा कदाग्रह न रखें ।

२१. गुणों का पक्षपात करें ।

२२. निषिद्ध देश-कालचर्या का त्याग करें ।

२३. प्रत्येक कार्य के आरंभ में अपनी शक्ति आदि का ख्याल रखें। (गर्विष्ट होकर शक्ति के उपरांत न करें)

२४. व्रत में रहे हुए और ज्ञान से बडे पुरुष आदि का सन्मान करें।

२५. माता-पितादि सेव्य और स्त्री, पुत्र, भगिनी आदि पोष्य वर्ग का पालन करें ।

२६. अच्छे-बुरे परिणाम आदि का दीर्घदृष्टि से विचार करें ।

२७. अच्छे-बुरे के तारतम्य रुप विशेष का जानकार बनें ।

२८. कृतज्ञ बनें । उपकारी के उपकार को न भूले ।

२९. उचित वर्तन से लोगों का प्रेम संपादन करें ।

३०. सत्कार्य का सेवन हो और अकार्य से बचा जाय इसलिए लज्जा गुण रखें ।

३१. दयालु बनें । अच्छे कार्य में उदारता रखें ।

३२. शांत प्रकृति अर्थात् क्रोध न करें । सुख-दुःख को कर्म का विपाक समझकर मन समताभाव में रखें ।

३३. दूसरों का भला - परोपकार करने में तत्पर रहें ।

३४. काम, क्रोधादि आंतर शत्रुओं का निग्रह करें ! (काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मात्सर्य अथवा हर्ष-ये छः आंतर शत्रु है ।)

३५. स्वइन्द्रिय समूह को वश में रखे, स्वेच्छागार का सेवन न करे। ऐसा गुणवान गृहस्थ, श्री वीतराग परमात्मा के सम्यकृत्व, देशविरतिरुप विशेष धर्म के लिए योग्य बनता है, नागरिक जीवन के आदर्श को पूर्ण करनेवाला बनता है और राष्ट्र की प्रतिष्ठा बढानेवाला बनता है ।

●

२. मानवता के विकास के लिए इतना जरुर करना

१. पापमित्रों का संग छोडो ।

२. कल्याण-धर्म मित्रों का संग करो ।

३. वेशभूषादि में उचित व्यवहार मर्यादा का उल्लंघन मत करो ।

४. वडिल-उपकारीजनों का सन्मान करो ।

५. हितैषी वृद्धजनों की सुसलाह का अनुसरण करो ।

६. दानादि सत्कार्यों में प्रवृत्ति करो ।

७. तारक श्री जिनेश्वर देव की भव्य पूजा करो ।

८. तारक साधु महात्मा का बराबर परिचय करो ।

९. विधि के अनुसार उनकी सेवा करो ।

१०. उनसे निरंतर धर्मशास्त्र का श्रवण करो ।

११. प्रयत्नपूर्वक तत्त्व का चिंतन करो ।

१२. दुःख के समय धैर्य धारण करो ।

१३. प्रत्येक कार्य में भविष्य के अच्छे-बुरे परिणाम का विचार करके यथायोग्य कदम उठाओ । आर्यसंस्कृति का ह्रास मत करो ।

१४. मृत्यु सामने है यह मत भूलो ।

१५. जिससे आत्मा का परलोक बिगडे वैसा कार्य मत करो ।

१६. नमस्कारादि मंगल जाप अवश्य करना ।

१७. सच्चरित्र सुनकर उन-उन महापुरुषों के उत्थान के दृष्टांत लो, पतन के नहीं ।

१८. आत्मसमाधि में विक्षेपकारक को छोड दो ।

१९. सर्व जीवों के प्रति प्रेम और उदारता रखो ।

२०. क्षमादि सद्गुणों में चित्त की धारणा रखो ।

२१. सत्क्रियायें करने में प्रमाद न करो, "संसार में दुःख ही है, सच्चा सुख मोक्ष में है और मुझे मोक्ष ही चाहिए।" ऐसा निश्चय रखकर भौतिक सुखों का राग और दुःखों का द्वेष करना छोड दो ।

●

३. नियमावली

निम्नलिखित नियमों में से जितने शक्य हो उतने अधिक से अधिक नियमों का स्वीकार करो ।

१. हंमेशा श्री जिनदर्शन तथा जिनपूजा करनी, यदि जिनालय की सुविधा न हो तो पूर्व दिशा में श्री विहरमान प्रभु को अथवा अपने सामने दिशा में भगवान की कल्पना करके चैत्यवंदन करना ।

२. शुद्ध प्ररुपक पंचमहाव्रतधारी गुरुमहाराज यदि गांव में हो तो उन्हें वंदन करना ।

३. सुबह कम से कम नवकारशी का पच्चक्खाण करना ।

४. धर्मदिशना श्रवण का यदि संयोग हो तो १५ मिनिट भी धर्मोपदेश सुनना ।

५. कंदमूल, बैगन, आलू, शकरकंद, गाजर, लहसून, मूला, बासी अन्न, कच्चे दूध, दही, छाश, श्रीखंडके साथ कठोल-पातरा, भजिया आदि द्विदल तथा बर्फ, आइसक्रीम आदि अभक्ष्य वस्तुओं का त्याग करना ।

६. अभक्ष्य मेथी वाले आचारादि का त्याग करना ।

७. चाय, पान, तंबाकु, सुपारी, बीडी, सिगरेट, भांग, अफीण, गांजादि दुर्व्यसन का त्याग करना ।

८. व्यापार में अथवा बातो-बातों में देव-गुरु-धर्म की सौगन्ध नहीं खानी ।

९. होटेल का चाय, नास्ता, आमलेट, चीज, व्हीस्की, बीयर, सोडा,

लेमन रसबरी, कोल्ड्रींक, रीमझीम, जिंजर, गोल्डस्पोट, नीरा आदि वस्तुओं का त्याग करना ।

१०. किसीकी पडी हुई चीज पूछे बिना नहीं लेना ।

११. प्रतिदिन एक सामायिक करना ।

१२. प्रतिदिन १०८ नवकारमंत्र का जाप करना (पक्की नवकारवाली)

१३. प्रतिदिन एक गाथा का अभ्यास करना अथवा आधा घण्टा भी धार्मिक पुस्तक का वांचन करना ।

१४. प्रतिदिन कम से कम एक पैसे का भी सुकृत के खाते में दान करना ।

१५. शाम को सूर्यास्त के समय चउविहार अथवा तिविहार, यदि दवाई लेनी हो तो दुविहार का भी पच्चक्खाण करना ।

१६. रात्रिभोजन का त्याग करना । रात्रि में चाय, पान, तंबाकु, बीडी, सुपारी भी नहीं लेनी । आखिर अंत में खाना खाने के बाद पानी के सिवाय कुछ भी नहीं लेना ।

१७. विडीयो, इन्टरनेट फेशबुक, चेनल, बल्यू फिल्म नाटक, सिनेमा, सरकस, क्रिकेट मेच, रेस, कुश्ती तथा वैसे ही अन्य मनोरंजन के तमाशे और फांसी आदि देखने नहीं जाना।

१८. पत्ते, चोपाइ, शतरंज, वीडियो गेम जैसे खेल पैसों से अथवा बिना पैसे भी नहीं खेलना ।

१९. निरपराधी त्रस जीवों को मारने की बुद्धि से जानबुझकर निरपेक्षता से नहीं मारना ।

२०. कुत्ते, बिल्ली, बंदर, तोते, मुर्गादि तिर्यंचो को नहीं लडवाना तथा शौक से उन्हें नहीं पालना । दया के रुप में कर सकते हैं ।

२१. बैलगाडी, घोडागाडी आदि में निश्चित की गयी सवारी के उपरांत नहीं बैठना और वादे से अथवा शर्त से उन्हें नहीं दौडाना।

२२. दूसरों के प्राणों का नुकसान हो वैसा झूठ या सच भी नहीं बोलना ।

२३. दूसरों पर झूठा आक्षेप या कलंक नहीं चढाना (मजाक में भी बोला न जाय उसका उपयोग रखना) चुगली भी नहीं खाना ।

२४. फांसी आदि शिक्षाके गुनाह में साक्षी या पंच नहीं बनना । (यदि बनना पडे तो दया रखकर निर्णय देना) कत्लखाना, मत्स्यादि उद्योग, खून-मांस आदि के व्यापार चूहे आदि जीवों को मारने के ठहराव आदि हिंसक कार्यों में भी मत नहीं देना ।

२५. कोर्ट में झूठी साक्षी नहीं देना ।

२६. झूठे लेख नहीं लिखने ।

२७. प्रगट चोर कहलाए और राज्य की तरफ से दंड मिले वैसी चोरी नहीं करनी ।

२८. चिठ्ठी, रेल्वे, टेक्स, धर्म-इन सबकी चोरी नहीं करना । समाज संबंधी चोरी, ठगाई नहीं करनी ।

२९. दूसरों की स्थापना पर अपना स्वामीत्व नहीं करना । (मालिक के अभाव में उसके नाम पर धर्मार्थ करना)

३०. जानबूझकर, दूसरों को ठगने की बुद्धि से, लेन-देन की वस्तु में अदला-बदली अथवा मिलावट नहीं करना ।

३१. झूठा तोल-माप या मिलावट नहीं करना ।

३२. ब्रह्मचर्य का पालन करना । यदि सर्वथा असंभव लगे तो चातुर्मास, छःअट्ठाई, पर्वतिथि, बारह तिथि, दस तिथि कम से

कम पांच तिथि, कल्याणक की तिथि और दिवस में तो अवश्य पालन करना। स्वयं की परिणित स्त्री के सिवाय सभी परस्त्री सधवा, विधवा, वेश्या अथवा कुमारिका सभी का त्याग करना। भोगलंपट नहीं बनना।

३३. बीमारी आदि के कारण के सिवाय किसी भी परस्त्री को छूना नहीं। (स्त्री परपुरुष को न छुए।)

३४. अन्य स्त्रियोंके साथ सहवास अथवा एकांत का सेवन नहीं करना अथवा विजातीय मित्राचार नहीं करना।

३५. विवाह की बारातादि में स्त्री अथवा पुरुष किसीके भी साथ भोजन या शयन नहीं करना।

३६. बीभत्स चित्र, सिनेमा, टी.वी. वीडीयो, नृत्य आदि देखने की और बीभत्स बातें, कहानियां पढने-सुनने की आदत नहीं रखनी।

३७. सृष्टि के विरुद्ध कर्म या हस्तदोषादि कृत्रिम रीति से नहीं करना।

३८. कुछ उम्र के बाद जीवन पर्यंत ब्रह्मचर्य अवश्य स्वीकार करना।

३९. परविवाह संबंधी आदेश-उपदेश नहीं देना। तथा वेश और केशभूषादि में मर्यादित रहना। फैशन अथवा आधुनिकता का शिकार नहीं बनना।

४०. गर्भाधान संस्कार, मृत्युभोज आदि प्रसंगो पर भोजन न करना।

४१. लोभदशा को मर्यादित करने के लिए परिग्रह का प्रमाण करना। जरुरते कम करके घर, दुकान, जमीन, जायदाद, गहने, सोना, चाँदी, अनाज, बर्तन, घी, रोकर्ड पैसे, दास, दासी, गाडी, बंगला, घोडादि का अथवा सब मिलाकर पैसोंका निश्चित प्रमाण करना।

४२. परिग्रह में रखें हुए प्रमाण से अधिक आरंभ व्यापारादि प्रवृत्ति नहीं करनी।

४३. जीवदया का पालन करते हुए तैयार वस्तु के व्यापार से आजीविका चल सके वैसा करना ।

४४. शेर, सट्टा, रेस, मटकादि जूए के धंधे नहीं करना ।

४५. सात व्यसन-शिकार, मांसभक्षण, चोरी, जुगार, परस्त्रीगमन, मदिरापान और वेश्या सेवन का त्याग करना।

४६. पुण्ययोग से यदि परिग्रह-प्रमाण से अधिक धन हो जाय तो उसका धर्मकार्य में सद्व्यय करना । आजीविका की प्रवृत्तियों में मैं सद्व्यय करुँगा ऐसा ध्येय अवश्य रखना परन्तु सद्व्यय करुँगा ऐसी बुद्धि से अधिक धन प्राप्ति की तृष्णा प्रवृत्ति नहीं बढ़ानी ।

४७. लेने-देने का व्यवहार शुद्ध रखना । किसीका उधार स्वयं अथवा बाप-दादा का किया हुआ हो तो दे देना । उसमें भी धर्म का उधार तो पहले ही दे देना ।

४८. किसकी आजीविका के आरंभ साधनों के द्वारा उधार वसूल नहीं करना । अदालत से दूर रहना ।

४९. यदि किसीसे उधार न आए तो उसे वोसिरा देना (छोड देना या भूल जाना) धर्म के अच्छे उपयोग में जाय उसकी अनुमोदना करना ।

५०. (बिना वारिसवाले) लावारिस का धन ग्रहण नहीं करना । यदि आ जाय तो उसके नाम से धर्मार्थ करना।

५१. समुद्र का सफर नहीं करना । चारों दिशा, विदिशा, उर्ध्व अधो दिशा में कुछ प्रमाण रखना । उससे अधिक सफर नहीं करना (धर्म के कारण से छूट)

५२. खाने में द्रव्य प्रमाण रखना ।

५३. कुएँ, तालाब, नदी में स्नान करने के लिए नहीं गिरना । (यदि अचानक गिर जाओ अथवा किनारे पर उतरना पडे तो उसकी जयणा ।

५४. बिना छाना हुआ पानी नहीं वापरना ।

५५. पानी पीने के बाद झूठी ग्लास को सूखा करने के बाद दूसरी बार पानी लेना और अंत में सूखा करके रखना ।

५६. भोजन-नास्ते के बाद थाली धोकर पीना ।

५७. कुछ संख्या से अधिक लीलोतरी नहीं रखना (लिस्ट बना देना)पर्वतिथि दिन तो संपूर्ण लीलोतरी का त्याग करना ।

५८. शहद, मांस, मदिरा, मक्खन का संपूर्ण त्याग करना ।

५९. अण्डे-मछली तथा उनके आटे आदि का भी मांसाहार समझकर त्याग करना ।

६०. वस्त्र, चप्पलादि की मर्यादित संख्या निर्धारित करना ।

६१. वड, पींपल, उडुंबर आदि के फल नहीं खाने ।

६२. मिल, धागी, शस्त्र, विष, घंटी, भट्टी, चमडी, द्विपद, चतुष्पद का व्यापार, जंगल कटवाना, कोयले बनवाना, पानी सुकवाना, जमीन खुदवाना, नहर बनवाना, गाडी, गाडे घुमाना, यंत्र चलाना आदि विविध प्रकार के अति पापकारी व्यापार नहीं करना तथा उनके शेरहोल्डर आदि भी नहीं बनना ।

६३. कन्याविक्रय अथवा वरविक्रय तथा उनके दलाल नहीं बनना।

६४. हिंसक औजार तथा अग्नि दूसरों को नहीं देना । (दाक्षिण्यता तथा धर्म के कारण जयणा)

६५. "श्वान, घोडा, बैलादि को खसी करो ।" "खेत जलाओ" आदि पापोपदेश नहीं देने । मनुष्य अथवा जानवरादि को नहीं लडवाना और मेले आदि में गाडी-घोडे नहीं दौडाने ।

६६. मन से बुरे संकल्प अथवा शेखचिल्ली की तरह विचारश्रेणी का निर्माण नहीं करना । वचन से भी बुरे शब्द-खराब गाली नहीं बोलने की सावधानी रखना ।

६७. सुबह-शाम आवश्यक प्रतिक्रमण करना । की हुई गलतियों का पश्चाताप करके पीछे हटना और अपनी आत्मा में गुणाधान करना ।

६८. हंमेशा उपयोगी वस्तुओं का प्रमाण सुबह-शाम धारण करना तथा उन्हें याद करना ।

६९. अष्टमी, चतुर्दशी के दिन उपवास, आयंबिल अथवा एकासणादि करना । तपश्चर्या करने का अभ्यास रखना ।

७०. उबला हुआ पानी पीना । (पक्का पानी)

७१. धर्मध्यान में रहने के लिए पर्वादि के दिन पौषध करना ।

७२. स्व-स्त्री विषय में भी अष्टमी, चतुर्दशी आदि पर्व के दिनों में और अट्ठाई तथा गर्भकाल में ब्रह्मचर्य का पालन करना । तथा अन्य दिनों में भी अतिप्रसंग का सेवन नहीं करना ।

७३. मुनिभगवंत तथा साधर्मिकों की हंमेशा भक्ति करना । वर्ष में कुछ दिन तो मुनिराज और मुनिराज के अभाव में व्रतधारी साधर्मिक की भक्ति में जो चीज उपयोगी न बनी हो वह चीज नहीं खाना ।

७४. प्राय:शाश्वत श्री सिद्धगिरिराज-गिरनार आदि तीर्थों की वर्ष में एक बार तो अवश्य यात्रा करनी ।

७५. सात धर्मक्षेत्र (श्री जिनमूर्ति, जिनमंदिर, जिनागम, साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका) साधारण अनुकंपा और जीवदया में शक्ति के अनुसार स्वद्रव्य प्रतिदिन अथवा वार्षिक रकम खर्च करने का नियम रखना ।

७६. श्री सिद्धगिरिराज-गिरनार में नव्वाणु यात्रा तथा चातुर्मास करना। जब तक न हो तब तक अमुक वस्तु का खाने में त्याग करना।

७७. वर्ष में एक बार तो जिनालय में बडा स्नात्र तथा पूजा अवश्य पढाना ।

७८. पूज्य गुरु महाराज को - साधु, साध्वीजी को यथाशक्ति निर्दोष वसति, वस्त्र, पात्र, औषध, पुस्तकादि उपयोगी वस्तुओं का दान करना ।

७९. साधर्मिक भाई-बहनों को स्वसंतति से भी अधिक वात्सल्य देना। संकट के समय में उनकी सहायता करके उनका बहुमान करना ।

८०. तपश्चर्या के निमित्त से एकबार रात्रिजागरण का कार्यक्रम रखना।

८१. चारित्र ग्रहण करने के भः रखना। कोई चारित्र लेते हो तो उन्हें नहीं रोकना उन्हें सहायक बनना । हो सके तो स्वपुत्रादि का दीक्षा महोत्सव करना ।

८२. श्री नवकार मंत्र के विधिपूर्वक आराधक बनने के लिए श्री सूत्र की आज्ञानुसार उपधान तप करना, करवाना, करवाने के भाव रखना तथा चारित्र न ले तब तक अपनी प्रिय वस्तु का त्याग करना ।

८३. जीवन में एक अथवा उससे भी अधिक जीर्णोद्धार, जिनमंदिर, पौषधशाला, ज्ञानमंदिर और पाठशाला जरुर बनवाना । शक्ति न

हो तो बनवाने के भाव रखना तथा बनवानेवाले की अनुमोदना करना ।

८४. श्री जिनमूर्ति भरवाना, प्राचीन जिनमूर्ति का उद्धार करना तथा आशातना होती हो तो उसका निवारण करने के लिए तत्पर रहना ।

८५. जीवन में हो सके तो संघभक्ति, प्रतिष्ठा, अंजनशलाका, गुरुपदारोपग के महोत्सव स्वद्रव्य व्यय से करना तथा तीर्थों के छः री पालित श्री संघ निकालने ।

८६. श्री नवपदजी, ज्ञानपंचमी आदि तप करना तथा यथाशक्ति उपधानादि करना ।

८७. श्री जिनभाषित आगमसाहित्य लिखवाना । पूज्य गुरुमहाराज के उपदेशानुसार उनका प्रचार करना तथा जरुरी स्थानों में सुरक्षित ज्ञानभंडार बनवाना ।

८८. स्वजनों को तथा अन्य को जितनी हो सके उतनी धर्म करने की हमेशा प्रेरणा करना ।

८९. धर्मकार्य करने में पौदगलिक आशा, लालच तथा नाम-कीर्ति की इच्छादि नहीं रखना ।

९०. दिगम्बर तथा यति के चैत्य या अन्य देव-देवी की मूर्ति को वंदन नहीं करना ।

९१. कुगुरु को तथा मिथ्यात्वी लोगों के पर्वों को धर्म की दृष्टि से नहीं मानना ।

९२. धर्म की शोभा बढे तथा लाभ बढे उस तरह सार्वजनिक कार्यो में मदद करना । दीन-दुःखीयों का उद्धार करना ।

९३. कुल, शील, ज्ञाति, देश, राज्य तथा धर्म विरुद्ध कार्य नहीं करना तथा धर्म के विरोधियों को प्रोत्साहन नहीं देना ।

९४. बच्चे माता-पिता को तथा स्त्रियाँ सासुजी-ससुरजी और पति को हंमेशा विनय से नमस्कार करके उनके आशीर्वाद प्राप्त करे ।

९५. वर्ष में एक बार गीतार्थ गुरुमहाराज से अपने पापों का प्रायश्चित करके आत्मशुद्धि करना ।

९६. उपकारी सुगुरु महाराज को प्रतिवर्ष वंदन करने जाना ।

९७. मध्यरात्रि में अथवा सुबह जल्दी उठकर श्री पंचपरमेष्ठी का ध्यान करना । तत् पश्चात् "मैं कौन हूँ ? कहाँ से आया हूँ ? क्या कर रहा हूँ ? क्या करना चाहिए ? शक्ति होते हुए भी मैं क्या नहीं कर रहा हूँ ? मैं मरकर कहाँ जाउंगा ? मेरा कुल-शील कौन सा है ? इन सवालों का विचार करना ।

९८. रात्रि में सोने से पहले परिवारको एकत्रित करके धर्मकथा करना ।

९९. सोते समय श्री अरिहंतादि चार की शरण स्वीकार करना और सर्व जीवों से क्षमापना करना, सर्व जीवों के कल्याण की कामना करना, नींद में भी वैर भाव को बढानेवाली प्रवृत्ति नहीं करना ।

१००. सोते समय "यदि देह का अवसान हो जाय तो मेरे सर्व आहारादि परिग्रह वोसिरे-वोसिरे-वोसिरे", अठारह पापस्थानकों को भी इसी तरह से वोसिराता हूँ, मैं अपने दुष्कृत की निंदा एवं सुकृत की अनुमोदना करता हूँ, मुझे कुछ व्रत -नियम हैं, उनके अतिचारों का मैं निवारण करता हूँ, जो व्रत-नियम बाकी हैं, उन्हें मैं ग्रहण करता हूँ, भवान्तर में भी मुझे श्री वीतराग

परमात्मा के धर्म की आराधना मिले"-इत्यादि का अवश्य चिन्तन करना ।

•

४. श्रावक के इक्कीस गुण

१. **अक्षुद्र :** क्षुद्र नहीं । उदार, धीर, गंभीर हृदयवाला, मानसिक विशिष्ट पाचनशक्तिवाला

२. **रुपवान :** पाँचों इन्द्रियों से परिपूर्ण, संपूर्ण सांगोपांग शरीरवाला, जिससे आराधना अच्छी तरह से कर सके ।

३. **सौम्य :** स्वभाव से शांत, सौम्य, चंदन जैसी शीतलतावाला, दूसरों के उपशम का कारण बननेवाला ।

४. **लोकप्रिय :** लोक विरुद्ध आचरण का त्यागी, अपने गुणों से लोगों में प्रीतिपात्र बना हुआ ।

५. **अक्रूर :** प्रसन्न चित्तवाला, कषाय-कलेश-क्रूरता से रहित, परदु:ख भंजक अथवा हमदर्द ।

६. **पापभीरु :** इहलोक-परलोक के दु:खों से, अपयश आदि से तथा पापों से डरनेवाला ।

७. **अशठ :** विश्वासपात्र, प्रशंसनीय तथा वाणी, विचार और वर्तन में सरल ।

८. **सुदाक्षिण्योपेत :** दूसरों की उचित प्रार्थना का आदर करनेवाला, दाक्षिण्य गुणवाला, स्वकार्य को छोडकर भी परोपकार करनेवाला ।

९. **लज्जालु :** अयोग्य कार्य करते हुए लज्जावाला, सदाचारी, यदि अयोग्य कार्य हो जाय तो भी उसका पश्चात्ताप करनेवाला ।

१०. **दयालु :** दुःखी, दरिद्र, दीन-हीन के प्रति दयावाला ।

११. **माध्यस्थ सौम्य दृष्टि :** तीव्र राग-द्वेष से रहित, निष्पक्षपाती, सत्याग्रही ।

१२. **गुणानुरागी :** गुणीजनों के गुणों के प्रति आदर-बहुमानवाला और दूसरों के दोषों की उपेक्षा करनेवाला ।

१३. **सत्कथी :** धर्मकथा में रुचिवाला और विकथा में अरुचिवाला ।

१४. **सुपक्षयुक्त :** जिसके स्नेही, स्वजनादि धर्मरुचिवाले हो ऐसा, हीनजनों का संग नहीं करनेवाला ।

१५. **दीर्घदर्शी :** प्रत्येक कार्य में शुभाशुभ का लाभालाभ का गहराई से विवेकपूर्वक विचार करनेवाला ।

१६. **विशेषज्ञ :** धर्म के विशेष स्वरुप का सूक्ष्म ज्ञाता, वस्तु के गुण-दोष का मर्मज्ञ ।

१७. **वृद्धानुग :** उत्तम-शिष्टजनों की मर्यादा के अनुसार अनुसरण करनेवाला-मर्यादापालक ।

१८. **विनीत :** अधिक गुणवान के प्रति मोक्ष के मूलभूत विनय गुण का आचरण करनेवाला ।

१९. **कृतज्ञ :** किसीके भी किए हुए उपकार को कभी भी नहीं भूलनेवाला । माता-पिता-गुरु आदि के उपकारों को निरंतर याद रखनेवाला ।

२०. **परहितार्थकारी :** दूसरे कहे या न कहे तो भी निःस्वार्थ भाव से परहित में परायण ।

२१. **लब्धलक्ष्य :** मनुष्य जीवन का लक्ष्य, हेय-ज्ञेय- उपादेय में विवेक और मुक्ति साधना की आराधना ही अंतिम ध्येय, आदि को गहराईपूर्वक समझनेवाला ।

●

५. भावश्रावक के १७ लक्षण

१. स्त्री को अनर्थ की खान समझे ।

२. इन्द्रियों को वश में रखे ।

३. अर्थ को अनर्थ का मूल समझे ।

४. संसार को दुःख की खान समझे ।

५. विषयों को विष समान समझे ।

६. आरंभो को पाप का मूल समझे ।

७. गृहवास को कारावास के समान समझे ।

८. श्री जिनधर्म की श्रद्धा के पालनादि में अविचल रहे ।

९. भेड प्रवाह में न खींचे जाय ।

१०. शास्त्रवचन को सन्मान दे ।

११. दानादि-सत्कार्यों में रुचि रखे ।

१२. शास्त्रोक्त क्रिया-विधि का आदर करे ।

१३. सांसारिक पदार्थों में राग द्वेष न करे ।

१४. पक्षपात छोडकर सत्य का अर्थी बने ।

१५. जल में कमल की तरह आसक्ति से अलिप्त रहे ।

१६. अर्थ-काम में औषधन्याय का अनुसरण करे ।

१७. मालिक नहीं, परन्तु मेहमान की तरह रहना सीखे ।

६. आचारों की समझ

श्री सम्यकत्व मूल बारह व्रत के कुल मिलाकर ८० अतिचार होते हैं। तदुपरान्त पंचाचार के ३९ अतिचार और संलेखना के ५ अतिचार शास्त्रों में फरमाए गए है। इस तरह कुल १२४ अतिचार होते हैं।

पंचाचार तथा संलेखना के आचार निम्नलिखित है।

१. **ज्ञानाचार के आठ आचार**

१. **काल :** अस्वाध्यायादि के समय में नहीं पढना, स्वाध्यायादि के समय में पढना और मध्याह्नादि काल के समय में नहीं पढना।

२. **विनय :** गुरु का वंदनादि विनय करना।

३. **बहुमान :** गुरु के प्रति हृदय में अत्यन्त भक्ति-भाव रखना।

४. **उपधान :** श्रावक पाठ्य सूत्रों का शास्त्रोक्त उपधानादि तप और साधु योगादि तप करे।

५. **अनिह्नव :** पाठक गुरु का नाम नही छुपाना।

६. **व्यंजन :** शब्दों का उच्चारण गलत नहीं करना।

७. **अर्थ :** अर्थ गलत नहीं करना।

८. **तदुभय :** शब्द और अर्थ दोनों गलत नहीं करने। इन आठ आचारों से विपरीत करना ये आठ अतिचार कहलाते हैं, वे ज्ञानाचार के सेवन में छोडने योग्य हैं।

२. **दर्शनाचार के आठ आचार**

यद्यपि दर्शन अर्थात् श्री जिनोक्त तत्त्वरुचि रुप सम्यक्त्व के

पाँच अतिचार कहे हैं । तथापि १२४ अतिचारों में दर्शनाचार के आठ आचारों से विपरीत वर्तन रुप आठ अतिचारों को भी अलग प्रतिक्रमणीय कहा जाता है । वे इस प्रकार है :

१. **निःशंकित :** सर्वज्ञ श्री जिनेश्वर भगवंतो के द्वारा कहे गए तत्त्व पदार्थ में शंका नहीं करना ।

२. **निःकांक्षित :** अन्य धर्मो को श्री जिनधर्म के समान नहीं मानना तथा उसकी इच्छा भी नहीं करना ।

३. **निर्विचिकित्स :** धर्मक्रिया के फल में संदेह नहीं रखना। पूज्य साधु-साध्वीजी भगवंतो की निंदा नहीं करना।

४. **अमूढदृष्टि :** दूसरों के चमत्कारी अथवा झुकती दुनिया को झुकाने की शक्ति आदि के प्रभाव से मोहित नहीं होना।

५. **उपबृंहणा :** धर्म के सुंदर कार्य करनेवाले तथा धर्म के लिए कष्ट सहन करनेवाले की प्रशंसा करना, सहानुभूति पूर्वक सहायक बनना ।

६. **स्थिरीकरण :** धर्म में अस्थिर बननेवाले को समझाकर, सहायता करके स्थिर करना ।

७. **वात्सल्य :** श्री चतुर्विध संघ - साधर्मिकों का वात्सल्य करना, उनके हित संबंधो की निरंतर चिंता करना ।

८. **प्रभावना :** सर्वोदयकारी श्री जिनशासन पर आते आक्रमणों को दूर करना तथा उसकी सर्वतोदिग्व्यापी उन्नति करना।

इन आठ आचारों से विपरीत कृत्य का नाम है - आठ अतिचार। इनका त्याग करना ।

३. चारित्राचार के आठ आचार

१. **ईर्यासमिति :** देखकर उपयोग पूर्वक गमनागमन करना ।

२. **भाषासमिति :** मुख के आगे मुहपत्ति आदि का उपयोग रखकर निरवद्य वचन बोलना ।

३. **एषणासमिति :** दुषित आहार, पानी, वस्त्र, पात्र, वसति प्रमुख न लेना ।

४. **आदान-मंड - मत्त - निक्षेपणा-समिति :** वस्त्र, पात्र प्रमुख वस्तु देखकर उपयोगपूर्वक पूंजकर, प्रमार्जना करके लेना और रखना व पूंजकर एवं प्रमार्जना करके बैठना और उठना ।

५. **पारिष्ठापनिका समिति :** थूंक, श्लेष्म, स्थंडिल, मात्रु आदि उपयोगपूर्वक देखकर परढना ।

६. **मनोगुप्ति :** मन में बुरे विचार नहीं करना । अच्छे-कुशल विचार करना ।

७. **वचनगुप्ति :** खराब अकुशल वचन नहीं बोलना । अच्छे वचन बोलना ।

८. **कायगुप्ति :** काया से अकुशल-खराब क्रिया नहीं करना । कुशल-अच्छी क्रिया जयणापूर्वक करना ।

इन आठ से विपरीत वर्तन करना ये चारित्राचार के आठ अतिचार कहे जाते है, इनका सेवन नहीं करना । ये समिति-गुप्ति गृहस्थों को भी प्रत्येक व्यवहार में विवेक से पालन करने योग्य है।

४. तपाचार के बारह आचार

१. **अनशन :** खाने-पीने की वस्तुओं का त्याग करना ।

२. **उनोदरिता :** निश्चित प्रमाण से कम खाना ।

३. **वृत्तिसंक्षेप :** खाद्यादि द्रव्यों में अल्पता रखना ।

४. **रसत्याग :** घी, दूध आदि भक्ष्य विगईयों का भी त्याग करना । स्वादवृत्ति को जीतना ।

५. **कायक्लेश :** शीत, आतापना, लोचादि कायकपट सहन करना ।

६. **संलीनता :** शरीर के अंगोपांग कछुए की तरह संकुचित रखना, जैसे-तैसे लम्बे-चौडे नहीं करना ।

७. **प्रायश्चित :** योग्य गीतार्थ गुरु से स्व-अपराध कपट रखे विना प्रगट करके, उनके द्वारा दिए जानेवाले प्रायश्चित को अच्छी तरह से वहन करके पापों का शुद्धिकरण करना।

८. **विनय :** श्री अरिहंतादि स्थानों की आशातना नहीं करना और भक्ति-वंदनादि उपचार करने के द्वारा विनय करना।

९. **वैयावच्च :** आचार्य, उपाध्याय, वाल, वृद्ध, ग्लान, तपस्वी तथा स्वगुर्वादि की सेवा शुश्रूपा करना ।

१०. **स्वाध्याय :** श्री जिनप्रवचन का अभ्यास, उपदेश, चिन्तनादि रुप स्वाध्याय करना ।

११. **ध्यान :** स्थिरतापूर्वक आज्ञाविचयादि रुप धर्मध्यान करना।

१. **धर्मध्यानके चार प्रकार है :**

१. **आज्ञाविचय :** सर्व प्राणियों को निश्चित रुप से गुणकारी और दोषका निवारण करनेवाली श्री जिनेश्वर की आज्ञा निश्चित रुप से सत्यं शिवं सुदरं है, इसका योग होना जीव को अत्यन्त दुर्लभ है। ऐसी विचारधारा में चित्त को एकाग्र करना ।

२. **अपाय विचय :** अकार्य सेवन से तथा कषायादि करने से प्रत्यक्ष तथा परोक्ष कितना नुकसान होता है, यह समझकर उसके चिन्तन में मन स्थिर करना।

३. **विपाकविचय :** सहजता से प्रमादादि के द्वारा बंधते हुए कर्मों के विपाक कितने और कैसे भयंकर भोगने पड़ेंगे, इस का एकाग्रता से विचार करना ।

४. **संस्थानविचय :** चौदह राजलोक प्रमाण अनादि संसार में जीव कर्मवश बनकर कितना परिभ्रमण कर रहा है, इसे जानकर, इससे कैसे मुक्ति प्राप्त कर सके, इसके विचार में मन को स्थिर करना ।

चित्त में परम शान्ति, वैराग्य, पापभीरुता, आत्मसंतोष, क्रियाभिरुचि आदि धर्मध्यान के शुभ चिन्ह हैं । विश्व के सभी जीवों के प्रति मैत्री गुणवानो के प्रति प्रमोद, दीन-दुःखी के प्रति करुणा और क्लिष्ट जीवों के प्रति माध्यस्थ भाव ।

१२. **कायोत्सर्ग :** काया की स्थूल चेष्टा का त्याग करके परम आदर्श श्री अरिहंत के स्मरण में निश्चल स्थिर रहना ।

इससे विपरीत क्रिया को तपाचार के बारह अतिचार कहा जाता है । उनका त्याग करना ।

५. वीर्याचार के तीन आचार

१. **मनोवीर्य :** आवश्यकादि धर्म क्रियाओं में मन की शक्ति को नहीं छुपाना ।

२. **वचनवीर्य :** आवश्यकादि धर्म क्रियाओं में बचन की शक्ति को नहीं छुपाना ।

३. **कायवीर्य :** आवश्यकादि धर्म क्रियाओं में काया की शक्ति को नहीं छुपाना ।

६. **संलेखना के पाँच अतिचार**

(इनका सेवन नहीं करने से पाँच आचार बनते हैं ।)

संलेखना प्रत्येक मनुष्य के लिए करने योग्य है । उनके अतिचार त्याग करने योग्य है । अंत में समाधिमरण की प्राप्ति के लिए शास्त्रविधि से तपश्चर्या करके योग्य बनाए हुए मन को तथा तन को आज्ञानुसार अनशनादि विधि से करना, इसका नाम है संलेखना । इसके पाँच अतिचार निम्नलिखित है :

१. **इहलोकाशंसाप्रयोग :** राजवैभवादि मनुष्य के सुख-सुविधा की इच्छा करना ।

२. **परलोकाशंसाप्रयोग :** परलोक में देवों के सुख-सुविधा की इच्छा करना ।

३. **जीविताशंसाप्रयोग :** स्वयं को मान-पूजादि सुख मिलता देखकर अधिक जीने की इच्छा करना ।

४. **मरणाशंसाप्रयोग :** स्वयं को अपमानादि दुःख मिलता देखकर जल्दी मरने की इच्छा करना ।

५. **कामभोगाशंसाप्रयोग :** स्वयं के द्वारा की गयी तपश्चर्यादि धर्म के बदले में स्वयं को रुप-सौभाग्य-स्त्री-पति आदि मिले, ऐसी इच्छा करना ।

भव्यात्माओं को धर्मानुष्ठान में उपर कहे अनुसार पाँच अतिचारों का त्याग करना चाहिए ।

इस तरह सम्यक्त्व मूल द्वादशव्रत के ८०, ज्ञानाचारादि ५ आचारों के ३९ तथा संलेखना के ५, इस तरह कुल मिलाकर १२४

अतिचार हुए । ये जानने योग्य हैं परन्तु आचरण करने योग्य नहीं है, इसीलिए जीवनपर्यंत इनका त्याग करना चाहिए ।

आत्मसात् करने से मानसिक शांति मिलेगी । संसार में पदार्थों की अनित्यता, अशरणता, नश्वरता, अशुचितादि विचार करने योग्य बारह भावनाओं के द्वारा, निरंतर मन को भावित करने से आत्मा में वैराग्य, पापभीरुता, क्षमा, संतोषादि धर्मगुणों की वृद्धि होती है ।

समग्र धरती को यदि कोई धनाढ्य व्यक्ति शिखरबंधी मंदिरों से भर दे और उससे वह जिस अशुभ कर्म का क्षय अथवा पुण्य कर्म का बंध करता है, उससे भी अधिक कर्मक्षय और पुण्यबंध सद्गुरु के पास निर्लज्ज बनकर अपने समस्त पापों का विस्तारपूर्वक निवेदन करनेवाला महान पुण्यात्मा करता है ।

७. मैं इन्सान बनूँ ।

१. शराब, मांस, जुआ और परस्त्रीगमन के महापापों की परछाई से भी मैं दूर रहुँगा ।

२. मन की पवित्रता को नष्ट करनेवाले T.V. इन्टरनेट देखने के घोर पापों का सेवन मैं नहीं करुँगा ।

३. मेरे और मुझे देखनेवालों के मन में विकार उत्पन्न हो वैसे उद्‌भट कपडे मैं नहीं पहनूंगा ।

४. तन-मन के सत्त्वोंका नाश करनेवाली प्रणय कथाएँ, डिटेक्टिव कहानियाँ मैं नहीं पढूँगा ।

५. जिसकी रक्षा के लिए लाखों भारतीय स्त्री-पुरुषों ने अपने जीवन का बलिदान दिया है, उन भारतीय संतो की संस्कृति को छिन्न-भिन्न करनेवाले तथा अनेक दुराचार फैलानेवाले निरोध के साधन, नसबंधी ओपरेशन, तलाक और गर्भपात के पापिष्ठ तत्त्वोंका भोग मैं नहीं बनूँगा ।

६. किसी भी तरह के काम वासना के पापो के शिकंजे में मैं नहीं फसूँगा । इन पापों ने अनेकों के जीवन बर्बाद किए हैं । मैं अपने जीवन को उज्जवल बनाने के लिए अत्यन्त सावधान रहूँगा ।

●

८. मैं आर्य बनूँ

१. चित्त को दूषित करनेवाले होटेल, क्लब और जीमखाने में मैं कभी कदम नहीं रखूँगा ।

२. जीवन में अत्यन्त निरुपयोगी और बर्बादी को आमंत्रण देनेवाले पान, बीडी, सिगरेट, तंबाकु, पाउं, भेल, शीतल पेयादि वस्तुओं का मैं सेवन नहीं करुँगा ।

३. लीपस्टीक और पाउडर के जूठे आडंबर नहीं करुँगी ।

४. भारतीय संस्कृति पर धिक्कार पैदा करनेवाले भाषण नहीं सुनूँगा।

५. मुझे पीडित करनेवाले सबसे बडे दुर्गुण (क्रोधादि) का जिस क्षण सेवन होगा उसी क्षण से छः घण्टे तक अन्न-जल का त्याग करुँगा ।

६. मेरे आश्रित धर्मपत्नी, बालकादि स्वजनों के साथ रोज आधा घण्टा धर्मचर्चा करुँगा ।

७. मेरे उपकारी माता-पितादि वडिलों का बहुमान करुँगा ।

८. दयापात्र जीवों को प्रतिदिन एक रुपए का दान करुँगा ।

●

९. मैं जैन बनूँ

१. १००-१०० वर्ष का नरक का आयुष्य तोडनेवाला नवकारशी का पच्चक्खाण रोज करुँगा ।

२. अगणित जीवों का नाश करनेवाला, जिनेश्वर परमात्मा की आज्ञा को तोडनेवाला रात्रिभोजन का पाप मैं नहीं करुँगा । सूर्यास्त के बाद पानी के सिवाय कोई भी वस्तु मुँह में नहीं डालूँगा ।

३. मेरे अनंत उपकारी, मेरे अनन्य शरण-विश्ववत्सल, त्रिलोकगुरु तीर्थंकर परमात्मा की पूजा मैं बडी मस्ती से करुँगा । किसी भी तरह समय निकालकर भी मेरे नाथ की पूजा अवश्य करुँगा ही । इसके बिना अब मुझे चैन नहीं मिलेगा ।

४. जिनेश्वर भगवंतो की मार्मिक वाणी को मेरे हृदय में उतारनेवाले सर्वसंग के त्यागी,षट्जीवनिकाय की रक्षा करनेवाले, संविग्न गीतार्थ गुरु भगवंत को मैं रोज वंदन करुँगा । उनकी अनुपस्थिति में उनकी तस्वीर को वंदन करुँगा।

५. अनंतानंत जीवो से व्याप्त आलु, गीली हल्दी, शकरकंद, गाजरादि कंदमूल जैसी वनस्पतियों का सेवन नहीं करुँगा । अपनी स्वाद पुष्टि के लिए अनंत जीवो की कब्र खोदने का काम मैं नहीं करुँगा ।

६. प्रतिदिन मंत्राधिराज श्री नवकार का १०८ बार जाप करुँगा ।

●

१०. मैं श्रावक बनूँ

१. मैं अपनी शक्ति के अनुसार थोडे समय में ही सम्यक्त्वमूलक अणुव्रतों को धारण करुँगा ।

२. मुनिजीवन के स्वाद स्वरुप सामायिक मैं रोज करुँगा ।

३. पापों के प्रायश्चित के रुप में दो टाईम प्रतिक्रमण करुँगा ।

४. रोज १ गाथा याद करने का पुरुषार्थ करुँगा अथवा आधा घण्टा स्वाध्याय करुँगा ।

५. प्रतिदिन चौदह नियम को धारण करुँगा ।

६. यदि गाँव में पूज्य गुरुदेवश्री होंगे तो जिनवाणी का श्रवण करुँगा।

७. पाँच पर्वतिथि के दिन एकासण करुँगा ।

८. प्रतिदिन एक साधर्मिकबंधु की यथाशक्ति भक्ति करुँगा । जिस दिन यह लाभ नहीं मिलेगा उस दिन कुछ रकम साधर्मिक भक्ति के खाते के लिए अलग रखूँगा ।

९. मेरे उपकारी गुरुदेवश्री समक्ष प्रतिवर्ष के अंत में पापों का प्रायश्चित करुँगा ।

१०. मेरे गाँव के संघ की पेढी के साधारण खाते में प्रतिवर्ष मेरी आमदनी की १ प्रतिशत रकम जमा करुँगा ।

११. प्रतिवर्ष एक तीर्थयात्रा करुँगा ।

१२. किसीको भी दीक्षा लेने में अंतराय नहीं करुँगा परन्तु प्रोत्साहित करुँगा ।

१३. प्राचीन शास्त्र ग्रंथों की रक्षा करने के लिए वर्ष में एक हजार श्लोक का लेखन करवाउंगा अथवा वैसे कार्य में प्रतिवर्ष पचास रुपए जमा करुँगा ।

तपोवन

उँचे संस्कार के साथ उँचे शिक्षण के

सोपान चढनेवाले

तपोवन में पढते बालक

अतिथियों को नमस्कार करते है ।

........प्रतिदिन नवकारशी का पच्चक्खाण करते हैं ।

..... प्रतिदिन अष्टप्रकारी जिनपूजा करते हैं ।

..... प्रतिदिन रात्रिभोजन का त्याग करते हैं ।

..... प्रतिदिन गुरुवंदन करते हैं ।

...... प्रतिदिन नयी-नयी कहानियाँ सुनते हैं ।

..... प्रतिदिन कुमारपाल राजा की आरती उतारते हैं ।

.... प्रतिदिन नयी-नयी बंदनायें गाते हैं ।

..... प्रतिदिन नए स्तवन के राग सीखते हैं ।

... कोम्प्यूटर सीखते हैं .... कराटे सीखते हैं

... स्केटींग सीखते है .... योगासन सीखते हैं

.... संगीतकला सीखते हैं .... नृत्यकला सीखते हैं

.... ललितकला सीखते हैं .... चित्रकला सीखते हैं

.... वक्तृत्वकला सीखते हैं ..... अभिनयकला सीखते हैं.....

..... अंग्रेजी में speech देना भी सीखते हैं । .....

मातापिता के सेवक बनते हैं ।

प्रभु के भक्त बनते हैं ।

गरीबों के सहारे बनते हैं ।

प्राणियों के मित्र बनते है ।

शक्तिमान बनने के साथ-साथ गुणवान भी बनते हैं ।

•

विश्वकल्याणकर श्री जिनशासन के भव्य अभ्युदय के लिए घर का प्रत्येक सदस्य कम से कम दस प्रतिज्ञा तो अवश्य करे ।

बुनियाद की प्रतिज्ञाये

१. कामोत्तेजक कपडे नहीं पहनने ।

२. बीडी, सिगरेट, पान, तंवाकु का सेवन नहीं करना ।

३. इन्टरनेट, चेनले का त्याग करना, टी.वी. पर सिनेमा तथा फिल्मीगीत नहीं देखने, विडियो पर अश्लील चित्र नहीं देखने।

४. शीतल पेय, आइस्क्रीम, बरफ का उपयोग नहीं करना ।

५. बाजार की बनी हुई वस्तु नहीं खानी (सावधानीपूर्वक बनाई गई वस्तु की छूट)

६. बालों की फेशन नहीं करनी ।

७. आधुनिकता को तीर्थस्थानों में और धर्म प्रवृत्तिओं में प्रवेश नहीं देना ।

८. अपने जन्मदिवस के उपलक्ष में कतलखाने से एक जीव

छुडवाना अथवा कुछ रकम पशुपालन केन्द्र (पांजरापोल) में देना ।

९. काम अथवा क्रोध उत्पन्न करनेवाली किसी भी प्रकार की कहानियाँ नहीं पढना ।

१०. माता-पिता के अथवा उनकी तस्वीर के चरण स्पर्श करना ।

११. शराब, मांस, परस्त्रीगमन, परपुरुषगमन का त्याग तथा ताश (पत्ते) से किसी भी प्रकार का जुआ नहीं खेलना । शर्त नहीं लगाना ।

१२. रात्रि में ९.३० मिनिट के बाद खास कारण बिना सांसारिक कार्यों के लिए बाहर नहीं जाना ।

१३. गच्छ अथवा पक्षादि के भेद के कारण कभी किसीकी निंदा नहीं करनी । और सुननी भी नहीं तथा गुणवान के प्रति प्रमोद भावना आत्मसात् करनी ।

१४. नवकारशी का पच्चक्खाण करना ।

१५. कंदमूल का त्याग करना ।

१६. रात्रिभोजन का त्याग करना । (अंत में खाना खाने के बाद पानी के सिवाय कुछ भी नहीं लेना)

१७. प्रतिदिन जिनपूजा करना । (हो सके तो स्वद्रव्य से ही)

१८. प्रतिदिन आधा घण्टा सूत्र कंठस्थ करना । (अथवा धार्मिक वांचन, जाप या व्याख्यान श्रवण करना)

१९. प्रतिदिन अथवा हर रविवार को एक सामायिक करना ।

२०. दिवस में एक बार भोजन के समय लुक्खी रोटी खाना । (यदि रोटी बनी हो तो) उस दिन आंयबिल के तपस्वियों को भावभरी

वंदना करना । (लुक्खी रोटी किसी भी चीज के साथ खा सकते हैं ।)

२१. थाली धोकर पीना ।

२२. शासन स्थापना दिवस के निमित्त से प्रति सुद अग्यारस के दिन घर में से कोई भी एक सदस्य आयंविल करे ।

२३. शासनरक्षा के निमित्त से प्रतिदिन १२ लोगस्स का कायोत्सर्ग करना ।

२४. घर में चारित्र के उपकरण रखना तथा प्रतिदिन सुबह दर्शन करना।

२५. प्रतिदिन १०८ नवकार गिनना ।

२६. सिनेमा की तर्जवाले धार्मिकगीत भी नहीं गाना ।

२७. प्रतिवर्ष संघ के साधारण खाते में अच्छी रकम भरना ।

२८. पप्पा, मम्मी, डेडी आदि शब्दों का प्रयोग घर में नहीं करना ।

२९. वर्ष में कम से कम ४०० रुपए साधर्मिक भक्ति में खर्च करना।

३०. दीक्षा न ले सके तब तक प्रिय वस्तु का त्याग करना ।

सावधान ! क्या आप जानते हो.......

पाप नकरने पर भी यदि प्रतिज्ञा नहीं ली जाय तो वह पाप चालु ही रहता है ?

जिस तरह किराये की चिट्ठी यदि रद्द न करवायी जाय तो उपयोग में नहीं आनेवाले (बंद) किराये के मकान का किराया भरना ही पडता है । उसी तरह कंदमूलादि न खाओ तो भी जब तक प्रतिज्ञा न लो तब तक कंदमूल खाने का ही पाप लगता है ।

जिसे पाप की प्रतिज्ञा नहीं है उसे पाप करने के चान्स खडे ही रहते हैं । यह चान्स पाप ही है ।

वीर प्रभु आजीवन हाथ जोडकर सामायिक की प्रतिज्ञा लेते हैं और आप यह छोटी सी प्रतिज्ञा लेने में आनाकानी करेंगे ।

पं. चन्द्रशेखरविजयजी

निम्नलिखित रिक्त स्थान भरे। साईड में परफोरेट की तरफ से फाडकर अपनी आलोचना की नोट के साथ यह कागज पूज्य गुरुदेवश्री को दें।

नाम ______________________ उम्र ________

पता ______________________

____

अधिक से अधिक तप (बियासण, एकासण, उपवासादि में से) कब तक हो सकेगा ?

सामायिक की तरह प्रतिक्रमण भी कर सकोगे ? ________

आवश्यक सूत्रों में कहाँ तक सूत्र कंठस्थ हैं ? ________

पूर्व में भव-आलोचना ली है ? .... किनसे ? ________

पूर्व में कितनी बार भव-आलोचना ली है ? ________

पूर्व का प्रायश्चित पूरा हो गया है ?...... हाँ/नहीं ________

अब जल्दी पूरा करेंगे ? हाँ/नहीं ? ________

यदि तप न हो सके तो निम्नानुसार करे।

१ उपवास : २० पक्की माला अथवा ४ घण्टे का स्वाध्याय अथवा ५ नयी गाथा कंठस्थ करना।

१ आयंबिल : उपर लिखी गयी आराधना से आधा समझना / २ एकासण / ४ बियासण।

१ उपवास : २ आयंबिल अथवा ४ एकासण अथवा ८ बियासण।

सूचना : जो सवाल पूछने हो, वे अलग कागज में ही पूछे, नहीं तो जवाब नहीं दिया जाएगा।

- देवद्रव्य का भक्षण हुआ हो तो उसे ब्याज के साथ भरे।
- जल्दी से जल्दी प्रायश्चित पूर्ण करके नए लगे हुए दोषों की पुनः प्रतिवर्ष अथवा दो वर्षों में भव-आलोचना करते रहना।
- आपका संपूर्ण पत्ता लिखकर एक कवर इस स्लीप के साथ पूज्यश्री को भेजे।
- तोडे गए नियम पुनः शुरु करे।

निम्नलिखित रिक्त स्थान गुरुदेवश्री भरेंगे, आप नहीं

सूचना : आपको जो माला गिनने के लिए दी गयी है वे सभी माला सामायिक में गिनना अथवा इरियावही की विधि करके गिनना। स्वाध्याय के घण्टे एक बैठक में, दूसरी बातें किए बिना कम से कम आधा घण्टा जो स्वाध्याय हो उसी की नोंध करना। तोडे गए नियम पुनः शुरु करे।

अट्ठम ______ छट्ठ ______ उपवास ______ आयंबिल ______ एकासण ______ बियासण ______

नवकारमंत्र की पक्की नवकारवाली ______________________

"बंभवयधारीणं नमो लोए सव्वसाहूणं" पद की माला ______________________

नयी गाथा कंठस्थ करना ______________________

उवस्सगहरं की माला ______________________

जीवदया में रकम खर्च करना ______________________ (सामायिक, प्रतिक्रमण, पौषध भी चलेगा)

पंच प्रतिक्रमण के सूत्र ______________________

प्रायश्चित दाता गुरुदेव ______________________

प्रायश्चित देने की तिथि __________ तारीख __________

प्रायश्चित देने का स्थल __________

प्रायश्चित __________ वर्ष में पूर्ण करना।

पूज्यश्री की तरफ से दो बोल __________

लज्जा गारवेण बहुस्सुयभयेण वावि दुच्चरियं ।

जे न कहंति गुरुणं न हु ते आराहगा हुं ति ॥

अपने अकृत्य कहनेमें शरम आती है । मैं बड़ा धर्मी हूँ, मैं बडा अमीर हूँ मेरे पाप कहने से मेरी लघुता होगी । इस प्रकार गर्व से या पांडित्य का नाश न हो जाए, इस भय से जो जीव शुद्ध आलोचना नहीं करते वे वास्तव में आराधक नहीं बनते हैं ।

आलोयणपरिणओ सम्मं संपट्ठिओ गुरु सगासे ।

जइ अंतरावि कालं करेइ आराहओ तहवि ॥

आत्मन् ! जो आत्मा अपने दुष्कृत्यकी शुद्ध आलोचना गुरु समक्ष कहने के लिए प्रस्थान करता है लेकिन प्रायश्चित लेने से पहले ही शायद वह व्यक्ति की मृत्यु हो जाए तो भी वह आराधक ही बनता है । लेकिन अशुद्ध आलोचना एवं गुरु समक्ष आलोचना लेनेका प्रयास ही नहीं करनेवाला विराधक बनता है ।

न हु सुज्झइ ससल्लो जह भणियं सासणे धुयरयाण
उद्धरियसव्वसल्लो सुज्झइ जीवो धुयकिलेसे ॥

कर्ममलसे मुक्त ऐसे वीतराग परमात्मा के शासन में कहा है कि अपने शल्य याने कि अपने पापको छिपाए हुए कोई भी मनुष्य शुद्ध नहीं होता है। राग-द्वेष से पर होकर क्लेशरहित बनकर सभी शल्य (पापव्यापार)को दूर करके ही मनुष्य शुद्ध बनता है। अतः शुद्ध होने के लिए गुरु समक्ष आलोचना अवश्य करनी चाहिए।